॥ श्री ॥

शुद्धि प्रभाकर.

श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहासादिके प्रमाणोंसे
उधृत और प्रबल परिषदोंसे सुभूषित.

श्रीमान् धर्मप्रेमी शेठजी नारायण लालजी
पितीने पण्डितों द्वारा संग्रहकराके मनुष्य
मात्रके कल्याणार्थ प्रकाशित की।

[प्रथमावृति १०००]

की ८ आना

॥ श्री ॥

शुद्धि प्रभाकर.

श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहासादिके प्रमाणोंसे
उधृत और प्रबल परिपदोंसे सुभूषित.

श्रीमान् धर्मप्रेमी शेठजी नारायण लालजी
पितीने पण्डितों द्वारा संग्रह कराके मनुष्य
मात्रके कल्याणार्थ प्रकाशित की।

प्रिन्टर — एम. जी. दळवी,
दत्तात्रय प्रिंटींग प्रेस, कांदावाडी—राधाकृष्णकी चाळ,
मुंबई नं ४.

[प्रथमावृत्ति १०००]

। श्री ।

भूमिका.

※ प्रिय पाठक वर्ग ※

जिस विषयको लेकर आज हम आप लोगोंके समक्ष उपस्थित होते हैं, उसकी चर्चा भारत वर्षमें एक छोरसे लेकर दुसरे छोरतक सर्वत्र वर्तमान है। यह कोई नई बाततो है नहीं पर आज जिस रूपमें यह समस्या हम लोगोंके सामने उपस्थित है, वह रूप अवश्यही हमारा घातक है। यही कारण है कि आज दिन वह आर्य्यजाति जिसकी सभ्यता, ज्ञान, विद्या बल, बुद्धि आदि सारे संसारको चकित करती थी वही इस दीन हीन शोचनीय अवस्थामें देख पडती है। जिसका साम्राज्य सारे संसारपर फैल रहाथा वही आज अपनेही घरमे विदेशियों तथा विधर्मियोंद्वारा पगपगपर अपमानित हो रही है। जिस आर्य्य जातिका ईश्वरीय ज्ञानकी सुशीतल छत्रछायमें आज दिनभी सारे संसारकी एक तृतीयांश जन संख्या सुख शांति पूर्वक विश्राम करती है, उसी आर्य्य जातिके धर्ममार्गमें इसप्रकार कुठाराघात ! अपने धर्म तथा जातिको इस तरह अपमानित होते देखकर किस आर्य्य संतानको धार्मिक व्यथा नहीं होती। अपने जातिय तथा धार्मिक पतनको देखकर किसका हृदय क्षुब्ध नहीं हो उठता। वर्तमान समयमें जिस रूपमें आक्रमणकर हम लोगोंको बलहीन बनाया जा रहा है वह है निज बंधु बांधवोंका छल, बल, कपट, लोभ, द्वारा निर्दयता पूर्वक अपने बंधु बांधवोंसे बिछोह—जो उपर से तो धार्मिक विच्छेदमें ही दीखता है परभीतरसे विधर्मीयोंकी संख्या वृद्धिकर अपनेही बंधु बांधवोंको शत्रुदलमे परिणितकर अपने नाशका कारण हो रहा है। आज दिन जो कांटा हमारे धार्मिक तथा जातीय संगठनके मार्गमें बोया जा रहा है तथा जो तरह तरहके अत्याचार हमारे उपर दिन दहाडे किये जा रहे हैं उसका कारण तो स्पष्ट है। हम लोगोंकी असावधानी से जो आततायी हमारे उपर अनेक प्रकारसे

अत्याचार करनेमें जराभी संकुचित नहीं होते, वे वास्तवमें कौन है ? बहुत दूरतक अंधकार में चिराग लेकर ढूंढने जानेकी कोई आवश्यक नहीं। अपने हृदयमें ही विचार करनेका कष्ट उठाइये। यह बात स्पष्ट तथा नितांत सत्य है कि आततायियोंका यह समूह सर्वथा विदेशीतों है ही नहीं। बल्कि अपनीही असावधानीके परिणाम स्वरूप अपनेही भोले भाले भ्रातृगण जो कतिपय निर्दय, कुटिल विदेशियोंद्वारा छल, बल पूर्वक अपनेही भाईयोंमे अलगकर दिये जानेपर किसी तरह अपने भाइयोंसे मिल न सके अथवा उनके भाइयोंने ही इस तरह उन्हे विधर्मीयोंके चंगुलमें फसजानेपर उन्हे अपना स्वीकार न करके उनकी कमजोरियोंके लिये उपयुक्त दंड समझकर उन्हें अपने समाजसे बहिष्कृत करदिया। वही बहिष्कृत तथा तिरष्कृत भाइ स्वापमानको न सहनकर सकनेके कारणही दुधमें शक्करकी तरह विधर्मियोंसे हिल मिलकर तरह तरहके अत्याचार करनेमें ही अपनेको कृत कृत्य समज अपने पूर्व अपमानका बदला चुकादेनेके लिये इस तरह कटिबद्ध हो सदा निन्दनीय तथा घृणित कर्म्म करने में तत्पर रहते हैं। भारतीय इतिहासके प्रेमी अंबर नरेश मानसिंह तथा राणा जयमल, वह शक्ताकोभी नही भूले होंगे जिन्होंने स्वदेश प्रिय स्वतंत्रताके सच्चे उपासक भारत माताके सपुत हिंदु सूर्य्य राणा प्रतापको विदेशी विधर्मियोंसे मिलकर अपमानित करनेमेंही अपनी सारी शक्ति तथा जिन्दगी लगादी। विदेशी विधर्मियोंकी कपट चातुर्य, मायाजाल, तथा कूट नितीज्ञता व निर्दयताके फंदेमें पड़कर निष्कपट साधु स्वभाव आर्य्य संतान विधर्मी बन क्षणिक मान तथा सुखके लोभसे अपनेको निवारण न कर सकी जिसका परिणाम यह हुवा कि अगणित भोले भाले हिंदू भाई आपसे बिछुडकर द्वेष पूर्वक नवीन उत्साहसे स्वदेश, स्वजात, तथा स्वधर्मपर कुठारा घात करने लगे तथा अग्निमें घृतकी तरह विदेशीयों तथा विधर्मीयोंका साथ देकर देश, जाति, तथा धर्मको त्याग म्लेच्छ (यवन) बनकर तन, मन, धनसे राक्षसी कार्य्य में सहायता करने लगे। बस फिर क्या था 'घरका भेदिया लंकादाह, देश, जाति धर्म, रसातलकी और अग्रसर हुआ और अभीभी वेगसे चला आ रहा है।

यहां इस विधर्मी यवन दल विशेषका पूर्ण इतिहास है। यहीं तक नहीं एक और दूसरी महाशक्ति है जो बल पूर्वक नहीं, बल्कि कंचन तथा कामिनी के बलपर आर्य्य संतानको भूलावा देकर अपने वशमें करती जा रही है दोनोंहीं भारतको गारत करनेमें तत्पर हैं।

और सनातन धर्म अथवा आर्य्य धर्मके लिये महाभया वह है तथा इसका जीवन कंटका कीर्ण तथा आशंकित है। जबतक इसका उन्मूलन तथा उत्पाटन कर दिया जाय तबतक आर्य्य सभ्यता आर्य्य जाति आर्य्य धर्मका अस्तित्व संशयापन्न है। यदि विचारशील धर्माभिमानी सनातन धर्म प्रिय आर्य्य जनता अपने इस तरह सीधे साधे भूले भटके हिंदू भाइयोंको विधर्मी यवनोंके चगुलसे छुडाकर गले नहीं लगावेगी तो अत्याचारका बाजार दिन प्रतिदिन गर्म होताही जायगा और सामाजिक तथा धार्मिक जीवन संकटापन्नहीं बना रहेगा तथा बचाखुचा स्वधर्माभिमानी भी द्वेषाग्नि में जलकर भष्माविशेष हो जायगा। यदि सनातन धर्म इसी तरह लाहका भागा तथा कच्चे बरतन की तरह छूतेही टूट जानेवाला बना रहा तो भगवान जाने उसकी दशा क्या होगी॥

जिस विशाल सनातन धर्म में अनेकानेक उत्तमोत्तम ग्रंथरत्न समस्त कार्य्य व्यवस्थाओंसे भरे पडे हैं वही सनातन धर्म अपने बिछडे हुए हिंदू भाइयोंकोही आज दिन अपने उत्तमोत्तम व्यवस्थाओंसे वञ्चित रखकर इस अधोगतिको प्राप्त हो रहा है और प्रत्येक स्वधर्माभिमानी को मर्माहतकर रहा है। इसी स्वधर्मरक्षा के निमित्त एक वयोवृद्ध स्वधर्माभिमानी वेद, शास्त्रादिके मर्मज्ञ विद्वानने इसबुढापेमें शास्त्रोंको मथकर 'शुद्धिप्रभाकर' का निर्माण किया है। सुचतुर लेखकने जिस कठिनाईसे इस ग्रंथका निर्माणकर स्वजाति तथा स्वधर्मकी सेवाकर जो प्रशंसनीय कार्य्य किया है उसके लिये हिंदुजाति सदाऋणि रहेगी। इस ग्रंथमें जो प्रमाण शुद्धिके लिये दिये गये हैं वे वेद, सूत्र, स्मृति, पुराण, इतिहासादीसे उध्धृत किये गये है।

जिससे समय समयपर प्राचीन तथा अर्वाचीन कालमें धर्मवेत्ताओंने कार्य्यमें लाकर पतितोद्धार प्रायश्चित्त देकर वर्णाश्रम धर्म की रक्षा की है। धर्मकी गति अत्यंत गूढ होते हुए भी जिस मार्गपर महापुरुष चले वही मार्ग औरोंके लिये श्रेयकर होता है। जबकि सनातन धर्मका मार्ग इस तरह कंटकाकीर्ण तथा संकटापन्न है तबतो अवश्यही यह 'शुद्धिप्रभाकर' कण्टकोन्मूलनेके लिये रामबाण औषधि है जिसका अबसेभी प्रयोगकर सनातन धर्म सर्वथा निष्कंटक बाधा रहित होकर स्वधर्मावलंबियोंको सुखशान्ति प्रदान कर सक्ता है। इसीमें देश, जाति, तथा धर्मका कल्याण है। यदि अभीभी देश, जाति, तथा धर्म प्रेमी, इस कल्याणकारी मार्गका अनुसरण करे तो देश, जाति, तथा धर्मका कल्याण अवश्य भावी है। आशा है कि विद्वजन, नवयुवक मण्डल, तथा धर्माधिकारी इस आवश्यकीय समस्या पूर्तिकी ओर विशेष ध्यान देकर देश, जाति, तथा धर्मके कल्याण कार्य्यमें हाथ बटा स्वदेश प्रेमका परिचय देते अपने कर्तव्यपथपर आरूढ होंगे।

जिस धार्मिक प्रवृत्तिके उत्साहसे प्रेरित हो इस ग्रंथके सुयोग्य संग्राहकने अती व परिश्रमकर एक जटिल समस्याकी पूर्ति करनेकी कृपाकी है उसे यदि आप धर्म प्रेमी सज्जन गुणग्राही बनकर अपनाने की कृपा करेंगे तो अवश्यही संग्राहक महाशयका पूर्ण श्रम सफल होगा। यद्यपि इस ग्रंथके सर्वांश आवश्यकीय तथा सुंदर होनेमें किंचन मात्रभी संदेह नहीं है तथापि प्राचीन भाषा शैली होनेसे सांप्रत हिंदी भाषा भाषी नवयुवकोंको यत्र तत्र कठिनाइयोंका सामना करना पडेगा। फिर भी यदि उसके दोषकी ओर विशेष ध्यान देकर गुण ग्रहण करनेकी चेष्टा करेंगे तो सहज भी सुयोग्य लेखककी सुयोग्यताका भलीभाति परिचय प्राप्तकर सकेंगे। जो कुछ त्रुटियां धर्माभिमानी वृद्ध लेखकके प्राचीन हिंदी भाषा विद होनेसे रह गई है द्वितीय संस्करणमें शुद्ध व्यक्त रूपमें प्रकाशित होगी॥

लेखकका वक्तव्य.

सर्व शक्तिमान् जगदोध्दार परमपिता परमेश्वरकी दया तथा प्रेरणासे जिस संग्रहको मैं आपलोगोंकी सेवामें भेट करने योग्य हो सका हूं उस प्रोत्साहके लिये स्वर्गीय शेठ राजा बहादुर मोतीलाल के पुत्र शेठ राजा बहादुर बंसीलालात्मज स्वधर्म प्रेमी नारायणलाल पित्ती अवश्यही धन्यवादके पात्र है जिनके प्रोत्साहन तथा उदारताके फल स्वरूप यह "शुध्दिप्रभाकर" आप धर्म प्रेमी महानुभावोंके करकमलोंमे सुशोभित हैं। सविनय प्रार्थना है कि जिस आवश्यकीय समस्याके सुलझानेके लिये इसे संग्रह किया गया है उसको कार्य्यान्वितकर मेरे परिश्रम को सफल बनावेंगे तथा जो कुछ त्रुटियां रहगई हों उसे क्षमाकर अपने उदार हृदयका परिचय देंगे॥

आपका शुभचिंतक,

काशिराम शर्मा.

॥ अथ ॥

शुद्धिप्रभाकर पूर्वार्ध
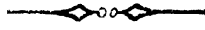
॥ ❀ ॥ श्रीसीतारामजी ॥ ❀ ॥

रामचन्द्र महं नत्वा सीता प्राणपतिं हरिम् ॥
ऋषिणां हर्ष जनकं खरहंतार राघवम् ॥ १ ॥
खण्डद्वयेन वक्ष्यामि नाम्ना शुद्धिप्रभाकरम् ॥
निष्कृतिस्तुयथासद्भिः पतितानामुदाहृता ॥२॥
पुर्वार्द्धकथितं सर्वं पूर्वं पूर्वतरंकृतम् ॥
आलोच्य सर्व तन्त्राणि महर्षिणाम्वचांसिच ॥३॥
उत्तरार्द्धे उद्धरिस्यामि पतितोद्धार पद्धतिम् ॥
उद्धारितं यथाश्रेष्ठैर्नीचा नीचतरापिच ॥ ४ ॥

❀ स्पष्टार्थ ❀

मै शुद्धि प्रभाकर नामक ग्रंथ (संग्रह करके) दो खण्डो में कहता हू ॥ सीताके प्राणपती हरि ऋषियों के हर्पको उत्पादन करने वाले खरादि राक्षसों के मारने वाले रामचन्द्रजी को प्रणाम करके जो श्रेष्ठोने पतितों के प्रायश्चित्त उदाहृत किये है सो पूर्व पूर्वतरकृत (पहले किया हुवा) पूर्वार्धमें कथित किया और उत्तरार्ध में श्रेष्ठोने नींच और नीचतरोंको जैसा उध्दार के वास्ते पतितोध्दार पध्दति कही है उसको उद्घाटन करूंगा ॥

बडेही आश्चर्यकी बात है घरमें दिपक होते हूये झूठा हल्ला करना और दीपक नहीं दीपक नहीं इसी तरहसे आपलोगोंका कहना वृथा है पतितोध्दार प्रमाण नहीं उन्होको स्पष्टतासे विचारोगे तो शास्त्रोंमें अनेकानेक प्रमाण **(तथा प्रायश्चित्तोद्धारित लेख है)** यह प्राचिन शुध्दिचाल सभा के प्रमाण आर्य्यलोगोंके अवलोकनार्थ संग्रह करे गये हैं जो आप यह शंका करेंगे कि चाण्डालादिकोंको स्पृश्य करना धर्मशास्त्रोंमें निषेध हैं (जिस्का प्रमाण)

असंस्पृष्टेनसंस्पृष्ट स्नानंतेनविधीयते ।

अर्थ--स्पर्श करनेके अयोग्य चाण्डालादिकोंको छूकर स्नान करना चाहिये और जो उस्का झूठा अन्न खाले तो छ महिने कृछ्र व्रत करे इत्यादि अनेक प्रमाण है इनको कहां चरितार्थ करोंगे उत्तर यह प्रमाण केवल आत्मवादीयोंको ब्रह्मप्राप्तिके अर्थ हैं जेसे कहा हैं ॥

अहारशुद्धौ सत्वशुद्धी सत्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः ॥

अर्थ—अहारकी शुध्दिसे सत्वशुध्दि सत्वकी शुध्दिसे ध्रुवस्थिति होती है इससे प्रतीत होता है कि गार्हस्थमें ये स्पृश्यास्पृश्य उचित नहीं हैं पाठक गणो इस बातको अच्छी तरहसे विचारों प्रातःकालमे सायंकालतक कितने पातकी उपपातकीयोंका संपर्क होता है अपने धर्मशास्त्रोंको आपही विचारलो क्या हो रहा हैं ॥

मुझे पूर्ण विश्वास है कि महानुभाव इस पुस्तकको पढकर समयाऽनुकूल शुध्दि देकर विधर्मगत भाइयोका उध्धार करेंगे जो जबरन विश्वास घात करके मुसलमान बनाये गये हैं देखिये कैसाही हिन्दु अन्त्यज नीच काम क्यों न करता हो परन्तु गोवधतो कदापि नहीं करेगा प्रायश्चित्त कराकर जो भाई मिलाये जायंगे उनको मिलानेका क्या लाभ है शास्त्रमर्यादाका पालन जातिकी वृध्दी गोमाताकी रक्षा इत्यादि अनेक लाभ है ॥

जब पठन पाटनमें लगे तब आंख खुलति है इन संशयोका अंत हो जायगा। जब इस पुस्तकको समस्त पढ लेवोगे जैसा गोहत्यारेकोबाबा तुलसीदासजीने प्रायश्चित्त दिया ये तो स्वामी तुलसीदासजीने पुर्वाचारियो की आज्ञानु कुलहि किया इसी तरेसे शुध्दि सनातन से आती है आप बिना विचारे पुज्य महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतिजीको दोष देते हो मत देव पहले अपने वरकी रचनाको देखलेवो फिर कुछ कहोतो अच्छा दिखता है आपके पुर्वजोंने कैसि २ तपस्याके साथ उपकार किया है जैसि सनातन से) चाल आति है उसको पठन करो अब आगे वेदादि प्रमाणोंको लेकर महानुभावोंने सभा करके जैसा २ पतितोको मिलाया है उन प्राचीन लेखोंको लिखता हूं ॥

यः प्रवृत्तां श्रुतिसम्यक् शास्त्रंवा मुनिभिः कृतम् ।
दूषयंत्यनाभिज्ञाय तं विधात् ब्रह्मघातिनम् ॥

अर्थ—प्रवृत्त श्रुति मुनियोंका बनाया हुआ धर्मशास्त्र इनको नहीं समझके जो दूषण करते है उनको ब्रह्मघातक जानें जिन ऋषियों के मतानुसार चाण्डालादि उच्चपदमें आये उनका सदृष्टान्त हाल येह है ऐसा कोई पाप नहीं है जिसका प्रायश्चित्त नहीं होता है ऐसा कोई रोग नहीं है जिसकी चिकित्सा नहीं होती है. ये जरूर है कि १ एक पाप के वास्ते हजारोंही प्रायश्चित्त विधि है ॥ एक रोगकी हजारोंही दवा है अब रह गया जाति संकर और रोग संकर इन दोनोंही का माहमुनियोंने समयानुकुल व्यवहार रख्खा है वह ये है रोगसंकर में जब चिकित्सा असाध्यतर हो जाती है तब हे गोविन्द हे दामोदर कहके भगवन्नामकी औषधो की जाती है इसी तरहसे जब जाती संकर हो जाता है तब भी भगवन्नामसेही प्रायश्चित्त दिया जाता है इसको हम उतरखंड में श्रीमद्भागवतादि ग्रंथोंसे प्रमाण सहित लिखेंगे अब हम प्रवृत्त श्रुतिको लेके जैसा महानुभावोंनें किया है उसको लिखते है. पहिले भी चार संप्रदा निर्वाहकोनें पतित मनुष्योंको प्रायश्चित्त

देके जातिमें मिला लिये है उनके हालात ये है सब से अधिक वे बड़ी भारी बात देखी जाती है कि ब्राह्मणोंनें शूद्रोको देवताके समान पूजन किया है. जब उन शूद्रोंका परम पद हो गया तब उनका विग्रह बनाकर विधिपूर्वक वेदमंत्रोसे प्रतिष्ठा करके पूजा कर रहे हैं जिनको आरवार कहते है. जिनका भोग लगा हुआ प्रसादादि नैवेद्योंको समस्त भारतवासी हिन्दू ग्रहण करते है सूतजीको उच्चासन पै विठाकर शौनकादि महामुनियोंने पूजन किया है. ये बात अष्टादश पुराणोंमें प्रसिद्ध है इसीको प्रवृत्त श्रुति कहते हे. और विशेषतर यह देखा गया है कि जिन्होंनें उत्तमोत्तम कर्म किये है उन सबोंका ब्राह्मणोनें पूजन किया है सनातन धर्मावलम्बी इस बातको सोमवती अमावास्या की कथामें देखे उसमें लिखा है धोबन के आंगन को ब्राह्मणने अपनी बहनाका वैधव्यदूर करनेके लिये लिपता रहा इन बातोंसे प्रतीत होता है कि कर्मही प्रधान है बिशेष तया समस्त कर्मोंमें ब्रह्मकर्म उत्तम है उस ब्रह्मकर्म को सनातनसे जो मनुष्य करते आ रहे है उनको ब्राह्मण कहते है जन्म तो समस्त मानवोंका एकही. रीतिसे होता है ॥

❋ प्राचीन शुद्धी चाल सभा ❋

राजा युधिष्ठिरकी ग्यारहवी पीढीमें भुवनपति राजाका पुत्ररणजीत हमेशा किरात हूणदेशवासियों के साथ यवन वृत्तिमें प्रवृत्त भया इसके अत्यन्त दुराचारोंको देखकर मंत्री और प्रधान २ व्यापारीयोंने इसको राज्य च्युतकर देनेकी सलाह करी और इसके छः मासके बालकको राजदेकर मन्त्री लोग राज कार्य निर्बाह करैंगे ऐसा विचार करके मन्त्रीको साथ लेकर प्रजागणराजा भुवनपतिके पास जाकर पूर्वोक्त प्रार्थना करी तब राजाने अपने पुत्रको बुलाकर प्रजाके सनमुख रणजीत को राजाच्युत और इसके पुत्र शुकदेव को राज्य देनेका प्रजाके अभिमत होकर सुनादिया राजपुत्रने अनेकानेक प्रश्न होनेके बाद यह कहाकि धर्मशास्त्रानुकूल विप्रगण हमको प्रायश्चित्त देकर शुध्द करे ये बात सुनके महाराजने पुरोहित को

बुलाकर कहाकि प्रायश्चित्तकी विवेचना करो तब राजाकी प्रार्थना को स्वीकार करके पुरोहितने नियत दिनमें बड़े २ पण्डितों को उपस्थित किया तब उन ब्राह्मणोंके विवादके पश्चात् नीलकण्ठ पण्डितने जो कहा वही सबोंने माना वो यह है ॥

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राम्ह्यमिदं जगत् ॥
ब्रह्मणा पूर्व सृष्टं हिकर्मभिर्वर्णतांगतम् ॥

अर्थः-वर्णोंका कोई विषेश नहीं क्योंकि प्रथम समस्त सत्व रूप ब्रह्मा की संतान ब्राह्मणहीथी परंतु कर्मके आधीन से भिन्न भिन्न वर्ण होगये ॥

काम भोग प्रिया तीक्ष्णा क्रोधनाःप्रियसाहसा ॥
त्यक्तस्वधर्मा रक्ताङ्गास्ते द्विजाः क्षत्रतांगताः ॥

अर्थः-उन्ही ब्राह्मणोंमेसें जो काम प्रीय भोगी कटुस्वभाव क्रोधी और साहसी होकर और ब्रह्मकर्मको छोडकर युद्ध प्रिय ये हुवे वो क्षत्रीय कहलाने लगे ब्रह्म कर्म को छोडकर क्षत्रीय बने वैसेही वैश्य ॥

गोभ्यो वृत्तिंसमास्थाय पीताः कृष्युपजीविनः ॥
स्वधर्मान्नानुतिष्ठंतिते द्विजाः वैष्यतांगताः ॥

अर्थः-जो ब्राह्मणोंने अपने धर्मको छोड गोसेवा कृषी और वाणिज्य करने लगे सो वैश्य हुए । ३ । ब्रह्म कर्म को छोडकर वैश्य बनगये वैसेही शूद्र बनगये

हिंसा नृताप्रिया लुब्धाः सर्व कर्मोप जीविनाः
कृष्णाः शौच परिभ्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रतांगतः ॥

अर्थः-जो ब्राह्मण हिंसायुक्त मिथ्यावादी लोभी सर्व कर्मके करने वाले और शौचसे रहित हुए सो शूद्र कहलाये

इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजाः वर्णान्तरं गताः ॥

धर्मो यज्ञक्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते ॥ इत्येते चतुरो वर्णाः येषां ब्राह्मी सरस्वती ॥ विहिता ब्राह्मणाः पूर्वं लोभाच्चाज्ञनतां गताः ॥

अर्थः- इन कर्मोंसे व्यस्त होकर चारों वर्ण हुए इन चारों वर्णोंको धर्म और यज्ञ कर्ममें निषेध नही है । इस प्रकारसे चार वर्ण हुए इन चारोंके लियेही ब्राह्मी सरस्वती (वेदवाणी) परमात्मानें दीहै ॥ परंतु ये लोभ वश से अज्ञानी बनगये ।

ब्रह्मणा ब्रह्मतन्त्रस्थास्तपस्तेषां न नश्यति ॥ ब्रह्म-धारयतां नित्यं व्रतानि नियमांस्तथा ॥ ब्रह्मचैव परं सृष्टंयेन जानन्तितेऽद्विजाः । तेषां बहु विधास्त्व-न्यास्तत्रतत्राहिजातयः ॥ पिशाचा राक्षसाः प्रेताः विविधाः म्लेछजातायः ॥ प्रनष्ट ज्ञान विज्ञाना स्वच्छंदा रचा चेष्टिताः ॥ भा० शां० ॥ १८ ॥

अर्थः- जो ब्राह्मण वेद और व्रत को धारण किये हैं. उनका तप नष्ट नहीं होता और इन्हीं द्विजोंकी इधरउधर अनेक जातियां देखी जाती हैं और इन्हींसे राक्षस पिशाच म्लेच्छादिक की उत्पत्ती है यदि कोई जाति पक्षपात मे पडकर अपने लोभके वशमें जन्मसे जातिको मानने वाले है ॥ वे जल्दी अपने पदसे गिर जाते है और नष्ट भ्रष्ट हो जाते है श्रीकृष्णजीनेभी कहा है:—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः नच सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगतिम् ॥ गी० अ० १६

अर्थः जहां शास्त्र मर्यादाका परित्याग होता है और कामचारता प्रवेश करती है वहां किसी प्रकारकाभी कल्याण नहीं होसकता है ॥

ज्यायस्वन्तश्चित्ति नोमावियोष्टसंधरायंतःसधुराश्च रन्तः ॥ अन्योऽन्यस्मै वल्गुवदन्तएतसध्रीची. नान्वः संमनमस्कृणोमि ॥ अथर्व० ३-३०-५

अर्थः-महान् बनो बुद्धिमान बनो मत बिछडो सफल होते जाओ सब एक मत्त होकर एकही धराभार को उठाओ एक दूसरेके लिये मीठा बोलो आवो मैं तुम लोगों को एक मन वाले बनाता हूँ ॥

उत्तदेवा अवहितं देवा उन्नयथाः पुनः । उतागश्च-क्रुषंदेवा देवाजीवथा पुनः अ० । १०-१३७ ।

अर्थः—अय विद्वान् लोगों जो नीचे गिरे हैं उन्होंको फिर उठाओ जिन्होंने पाप किया है और जिनका जीवन मैला होगया है । उनको पुनः शुद्ध करो याने फिरसे जीवन दो ॥

आसंयतमिंद्रणः स्वस्तिं शत्रुतूर्याय वृहती ममृ-ध्राम् ययादासान्यर्याणि वृत्रा करो वाज्रिन् सुतु-काना हुषाणि । ऋ०६-२२-१०

अर्थः—हे इन्द्र शत्रओंके निवारणार्थ हम तुम बडी संघ शक्ति को दे जो हिंसा रहित और शुभ कारक है, जिससे तुम दासोंको (अनार्य्यों को) आर्य बनाते हो जो हजारो मनुष्यों का उच्च होनेका हेतु है ॥

इन्द्रंवर्द्धन्तो अप्तुऽरः कृणवन्तो विश्वमार्यम् अप-घ्नन्तो अरावणः ।

अर्थः—परमेश्वरके नामको बढाते हुए सब संसारको आर्य बनाते हुए अज्ञानियोंको गीराते हुए वृद्धि करें । ऐसे व्यवहार वृध्दि करें ॥

मिमीहि श्लोका मास्ये पर्यन्य इव ततनः गाय गायत्र मुकथ्यम ॥ ऋ० १-३८-१४

अर्थः–हे विद्वान् तुम मुखसे वेद के स्तुति वचनों को भर और मेघके तुल्य. सर्वत्र वर्षा दे--गाने योग्य गायत्री छन्द को गा और दुसरों से गवाव ॥

यथेमांवाचं कल्याणी मावदानी जनेभ्यः ब्रह्मरा-जन्याभ्या ँ शूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय यजु० ॥ २६ ॥ २-येन देवा न विपत्ती वोच विद्विष्यते मिथः तत्कृणुमो ब्रह्मवो गृहे संसान-पुरुषेम्यः ॥ अ० ३० ॥ ४

अर्थः–जैसे मै इस कल्याण करने वाली वाणी को सम्पूर्ण जनोंके लिये उपदेश करता हूँ वैसे ही तुम भी ब्राह्मणादि वर्णोंको अपने और पराये को उपदेश करो ॥ जिस वेद ज्ञान से विद्वान् लोग अपने से अलग नहीं होते और परस्पर द्वेष नहीं करते उस वेदको हम तुमारे घरोंमे देते है जो सब का दाय भाग ज्ञान है ॥

ये धीवानो रथकाराःकर्मकारा ये मनीषिणः उप-स्तीन् पर्णमह्यं त्वं मर्वान् कृण्वोभितो जनान् ॥ अ० ३-५-६ प्रियं माकृणु देवेषु प्रियं राजसुमा कृणु-प्रियं सर्वस्य पश्यतउत शूद्रउत्तार्य अ० १९-६२-१

अर्थ--हे पालक परमेश्वर जो बुद्धिमान् कैवर्त (धीमर) जाल के बनानेवाले अर्थात् बढ़ई लोहार आदि हैं उन सबोको मेरे समीप बैठनेवाला बना। हे ईश्वर मुझे ब्राह्मणों का प्यारा बना मुझे क्षत्रियों का प्यारा बना चाहे वह शुद्र हो या आर्य हो ॥

धर्म चर्यया जघन्यो वर्णः पूर्व पूर्व वर्ण मापद्यते जाति परिवृत्तौ ॥ अधर्म चर्य्यया पूर्वो वर्णो

जघन्यं जघन्यं वर्ण मापद्यते जातिपरिवृत्तो ॥
अपस्तम्भ २०-५-११

अर्थः—धर्माचरणसे निकृष्ठ वर्ण अपने से उत्तम वर्णको प्राप्त होता है और अधर्माचरण से श्रेष्ठ वर्ण भी नीच बन जाता है ॥

योन धित्य द्विजो वेद अन्यत्र कुरुते श्रमम् ॥
सजीवन्नेव शूद्रत्वं आशुगच्छति सान्वयम् । भा०२-१६

अर्थ—जो विप्र वेद को न पढकर अन्यत्र श्रम करता है वह ब्राह्मण वंश सहित जीता ही शूद्र हो जाता है वसिष्ठजीका भी यही मत है महाभारत बन पर्व अध्याय २१६ माह भा० शां० अध्याय १६ ॥

यस्तु शूद्रो दमे सत्वे धर्मेच सततोस्थितः- तं ब्राह्मणमहंमन्ये वृत्ते नहि भवे द्विजः--शूद्रे चैत-द्भवेल्लक्षं द्विजेतच्च न विद्यते । नैव शूद्रो भवे च्छूद्रो ब्राह्मणो नच ब्राह्मणः ।

अर्थ—जो शूद्र धर्माचरण करता है वो ब्राह्मण के समान है जो ब्राह्मण अधर्माचरण करता है वो शूद्रके समान है ।

वर्णों वृणोत्ति नि० अ० २ खं० ३

अर्थ—वर्ण इसलिये कहा जाता है उसे मनुष्य गुण कर्म स्वभावसे बनता है भारद्वाज मुनिने भृगुजीसे पूंछा कि ब्राह्मण क्षत्रिय वैष्य और शूद्र कैसे बनते है ॥

भारद्वाज प्रश्न ।

ब्राह्मणाः केन भवति क्षत्रियो वा द्विजोतम वैश्य शूद्रश्च विप्रर्षे तद्ब्रूहि यदतां वर । मा० शां०

भृगुजी बोले श्लोक

जात कर्मादिभिर्यस्तु संस्कार संस्कृतः शुचिः ॥ वेदाध्ययन संपन्नः षटसु कर्म स्वव स्थितः ॥ शौचाचारः स्थितः सम्यक् विद्य त्साशी गुरुप्रियः नित्यव्राति सत्यपरः सवैः ब्राह्मण उच्यते ॥ सत्यं दान मथाद्रोहं आनृशंस्यं त्रया घृणाः तपश्च दृश्यते यत्र स ब्राह्मण इत्ति स्मृतः ॥ क्षत्रंच सेवते कर्म वेदाध्ययन संगतः ॥ दानादान रति येस्तु सवैक्षत्रिय उच्यते (५) विशत्याशु पशुभ्यश्च कृष्या दान रति ।शुचिः ॥ वेदाध्ययन संपन्नः सवैश्य इति संगतः । सर्वभक्षरतिर्नित्यं सर्व कर्म करोऽशुचिः । त्यक्त वेदस्त्वनाचारः सवै शूद्र इति स्मृतः ॥ ७ ॥

अर्थ—जात कर्मादि संस्कार संस्कृत हो शुचि हो वेदाध्ययन संपन्न हो छः कर्म में स्थित हो शौचाचार स्थित सम्यक् यज्ञ शेषके खानेवाला गुरुभक्त नित्य प्रतिसत्यपर हो सो ब्राह्मण होता है सत्य दान किसीका वैरी नही. दयावान् और घृणा—लज्जा—तप जिसमें दिखाई देते है वो ब्राह्मण है क्षत्र धर्ममें रुचि वेदाध्ययन संगत दाना दान रति जो है वह क्षत्री है पशुओं का पालन खेतीका करना वेदाध्ययन संपन्न जो है । वह वैश्य है सर्व भक्षमें प्रीति सर्व कर्म को करनेवाला और अशुचित्यक्तवेद अनाचार रत जो है वह शूद्र है । इसी कीं पुष्टि महाभारत वनपर्व अध्याय २१६ में की गई है ॥

ब्राह्मणः पतनियेषु वर्तमानो विकर्मसु । दाम्भिको दुष्कृतः पापः शूद्रेण सदृशो भवेत् । यस्तु शूद्रो

दमेसत्ये धर्मेच सततो स्थितः । तं ब्राह्मणमहं मन्ये वृत्ते न हिभवे द्विजाः ॥ २-अ०

अर्थः—दम्भी पापी और पतित दुष्कर्मों में प्रवृत्त जो विप्र हैं वह शूद्र है और जा शूद्र दम-धर्म और सत्य में आसक्त है मैं उनको ब्राह्मण मानता हूं क्योंकि वृत्त ही ब्राह्मण बनता हैं फिर भारद्वाज ने भृगुजी से पूंछा कि—

काम क्रोध भयं लोभः शोक चिन्ता क्षुधाश्रमाः । सर्वेषांनः प्रभवति कस्माद्वर्णो विभज्यते ॥ स्वेदमूत्र पुरीषाणि श्लेष्मा पित्तेस शोणितम् । तन् रक्षाति सर्वेषांकस्माद्वर्णो विभज्यते ॥ जंगमा नामसंख्येयास्थावराणांचजातयः ॥ तेषां विविधवर्णानां कुतो वर्ण विनिश्चयः मा० शा० अ० १८८ ॥

अर्थ—काम क्रोधादि मल मूत्रादि और सप्तधातु मनुष्य मात्रोंके एकही है शरीर की रक्षा सभोंकी करते हुये वर्ण विभाग कैसे असंख्येय जंगमस्थावरादि जाति विविध वर्णोंका वर्ण निश्चय कैसा इसका उत्तर देते हुए भृगु महात्माने जो कहा है उसको हम न विशेषोऽस्ति वर्णानां यहां से लेकर यः शास्त्र विधि मुत्सृजा यहांतक कह आये है ये भारद्वाजजीका प्रश्न और भृगुजीका उत्तर है इसमें वः प्रमाणोंको भी कह दिया हूं। हे सभासदो अब मैं जावालिके चरित्र को कहता हूं जिसकी जातिकाभी निश्चय नहीं था जावालाके पुत्र सत्य कामने अपनी मातासे पूंछाकि मै ब्रह्मचर्य वास करना चाहता हूं बता मैं किस गोत्रका हूं तब उसकी माताने जवाब दिया कि मैं जवानीमें तेरको प्राप्त करी हूं मै नहीं जानती हूं कि तूं किस गोत्र का है हां इतना तः जानती हूं कि मेरा नाम जावाला है और तेरा नाम सत्यकाम सो तूं पूछने वाले से यही

कहो कि मैं जाबाला का पुत्र सत्यकामहूं जब सत्यकामनें गौतम मुनिके पास जाकर प्रार्थना किया कि हे भगवन् मैं आपकेपास में ब्रह्मचर्य वास करूंगा तब गौतम महामुनि ने पूछा कि तुम किस गोत्रके हो उसने माताके वचनानुसार कह दिया तब उस ऋषिने कहा यह बात सच्चि है क्यों कि ऐसी सचाई सिवाय ब्राह्मण के कोई नहीं कह सकता है सौम्य जावो जमिधा लेआवो मैं तेरा उपनयन करूंगा क्यों कि तूं सचाई से नहीं गिरा है छांदोग्य प्रपा ४ खंड ४ । और ऐतरेय ब्राह्मण ॥ २।१९ ॥ में कब कयेलुकका इतिहास आता है इन्हों को भी यज्ञ से ऋषि लोगोंने शूद्रका पुत्र समझकर दूसरे को जुहारी समझकर यज्ञ से निकाल दिया पश्चात् येलुकने विद्या पढनेका व्रत धारण किया और सम्पूर्ण ऋग्वेद पढते २ उसको नये २ विषय प्रकाशित होने लगे यह देख ऋषियों ने उसे यज्ञ में बुलाया और उसको आचार्य बनाकर यज्ञकी विधिको पूरा कराया और पीछे से यही ऋग्वेद मं० १० अनु० ३ सू० ३०-३४ तकका ऋषि हुआ और पृखधु जो ब्राह्मण था वो कर्म बशसे शूद्र होगया ये वचन विष्णु पुराण ४।१।१४ में लिखा है ॥

पृषध्रस्तु गोवधाच्छूद्रत्वमगमत् नाभागोने दिष्ट पुत्रस्तु वैश्यतामगमत् ॥ वि० ४-१

अर्थ–नेदिष्टका पुत्र नाभाग वैश्य बनगया ॥

गोवर्चेन मात्रेण स ब्रह्मर्षितां गतः ॥ मा० अनु० अ० ३०

अर्थ–वीत हव्य राजा भृगुवचन से ब्रह्मर्षि बना युवनाश्वके पुत्र और हरित हारीत हुए वह सब आंगिरा गोत्र के ब्राह्मण बने ॥

विश्वामित्रोऽपि धर्मात्मा लब्ध्वा ब्राह्मण्यमुत्तमम् ॥ पुजयामास ब्रह्मर्षिं वशिष्ठं जयातवरम् ॥ वा० रा० बा० स० ६५ ॥

धर्मात्मा विश्वामित्रजीने उत्तम ब्राह्मण की पदवी पाई इत्यादि उदाहरणोंसे यह माल्रूम होता हैं कि कर्मवशसे वर्ण परिवर्तन होता रहा है ॥ म्लेच्छ यवन दि शूद्रोंकी उत्पत्ति और परीवर्तन महा भा० शां० प० अ० १८८ श्लोक १८ में भगुवाक्यसे यह दिखाया गया है कि ब्राह्मण क्षत्रियादि चभृतुर्वर्णोंसे ही म्लेच्छादिकोकी उत्पत्ति है ॥ इसका प्रमाण महाभा० शां० रा० प्र० अ० ६५ में इस प्रकार से है ॥

यवना किराता गांधाराश्चिना शवर वर्वराशकास्तुषारा कंकाश्च पल्लवाश्चाध्रमध्रका ॥ पौंड्रा पुलिंदारमठा कां भौजाश्चैव सर्वशः ॥ ब्रह्म क्षत्र प्रसूताश्च वैश्या शूद्राश्च मानवाः ॥

अर्थ—यवन (यूनान) किरात गांधार चीन शवार वरवर शक तुषार कंक—पल्लव—अध्र—मध्रक—पौंड्र—पुलिंद—रमठ—कांभोज ये सब जाति क्रिया भ्रष्ठ ब्राह्मणादिकों का ही नामांतर है (इसी वातको) यजुर्वेद अ० ३१ के मंत्रका अर्थ से भी गुणानुसार चार वर्णोंका भी उपदेश किया ॥ इस तरह से खुलासा प्रतीत होता है कि (ब्राह्मणोश्चोयादि यजु० अ० ३१ में देखो मनुमहाराजने भी यही माना है कि यह क्षत्रिय जातियें ही उपनयनादि क्रिया लोप हो जानेसे और वेद वेत्ता ब्राह्मणोंके न मिलनेसे शनैः शनैः धर्म हीन हो गई और यवन म्लेच्छादि नामो से प्रसिद्ध हो गई ॥ और आगे श्लोक ४९ में मनुजी बताते है कि ब्राह्मणादि वर्णही क्रिया लोप से बाहिरकी जातियें बनी और वे जातियें चाहे म्लेच्छ भाषासे युक्तथी चाहे आर्य भाषासे सब की सब दस्यु कहलाई और निलकंठने विष्णुपुराण अंश ४ अ० ३ के प्रमाण देते हुये ब्राह्मणोंके जुल्म से अनेक स्थानोमें लोगोंको शिष्यादिकों की प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके अर्थ जाति च्युत करदिया इस वातको इतिहासोंमे दिखाया हुआ है उसका कुछ प्रमाण लिखते है सगर और वसिष्ट का संवाद इस प्रकार है ॥

ततश्च पितृराज्य हरणाय है हय ताल जंघादि वधाय प्रातिज्ञा मकरोत् अथेतान् वाशिष्ठो जीवन-मृतकान् कृत्वा सगरमाह वत्स अलमेभिर्जीवन मृतकै रनुमृत्तैरेतेच मयैव त्वत्प्रातिज्ञा परिपाल-नाय निजधर्म द्विजसंघ परित्यागं कारिताः ॥ सा तथेति तद्गुरुवचनम् भिनंद्यतेषां वेशान्यत्न मकारयत् यवनान् मुण्डित शिरसोऽर्द्धमुण्डान् शकान् प्रलम्बकेशान् पल्हवांश्चस्यश्मधारान् निःस्वाध्याय वषट्कारान् एतानन्यांश्च क्षत्रियांश्च-कार ते चात्मधर्म परित्यागात् ब्राह्मणैश्च परित्यक्ताः म्लेच्छतां ययुः ॥

अर्थ-जब त्रिशंकुके वंशमें बाहूनाम राजा हुआ वह है हय तालजंघादिको से हारकर अपनी गर्भवती स्त्री के साथ जंगल में भाग गया और वहीं और्वी ऋषि के आश्रमके पास उसकी मृत्यु हुई तब उसकी स्त्री अपने को निराश्रय देखके पतिके साथ जलने लगी और्वी ऋषिने उसको सामझाया कि गर्भवती स्त्रीको सती होना निषेध है और तेरे गर्भ से जो पुत्र होगा वह चक्रवर्ती राजा होगा इस प्रकार उसको समझाकर अपने आश्रममें ले आया कुछदिन बाद उसको लड़का हुआ ऋषिने उसका जातकादि संस्कार करके सगर नाम रखा और विधि पूर्वक समयानुसार उपनयन संस्कार किया शास्त्र और शस्त्र विधामें निपुण किया जब वह लड़का ज्ञानवान् हुआ तब अपनी मतासे वंश और वनमें आनेका कारण पूंछा तब माताने सब हाल बताया तब उसने अपने पिताका राज्य वापस लेने के लिये शत्रुवो को मारनेकी प्रतिज्ञा की और है हय तालजंघादिको का

नाश किया वे लोग अपनी रक्षा अर्थ सगर के कुलगुरु वशिष्ट की शरण में गये तब वशिष्ट ने सगर को बुलाकर कहा कि इनको मत मारो मैने इनको तुमारी प्रतिज्ञा पूर्तिके लिये अपने धर्म और द्विजोंके संगसे बाहर. कर दिया सगर ने अपने कुलगुरु के आज्ञा को मानकर उनके वंशोमे परिवर्तन करदिया जैसे किसीका शिर मुंडवायन नाम दियां किसीके केश रखवा दिये और शक नाम रक्खा किसी किसीके दाढियें रखवादिया उनका पल्हव आदि नाम रक्खा और उन सबको स्वाध्याय आदिसे बहार कर दिया इसप्रकार वह सब-धर्म त्यागनेसे तथा ब्राह्मणोंके त्यागणेसे म्लेच्छ बन गये आपस्तंभ सूत्रमें लिखा है ॥

यस्या प्रपिता महादेरुपनयनं न स्मर्यते तत्रार्था देतेषामापि पुरुषाणा मनुपनीतत्वं ते सर्वे श्मशा-नव दशुचयः तेस्वागते स्वभ्युत्थानंच वर्जयेत् आपद्यपि न कुर्यादित्यर्थः तेषां स्वयमेव शुद्धि-मिच्छुनां प्रायश्चित्तानं तरमुयनयनम् ॥

जिनके प्रपितामह आदिसे यज्ञोपवीत न हुवा अनुपनीतत्व है वे श्मशानकेतुल्य अपवित्र है इनके आनेपर खडा होना अथवा उनसे-खान पानादि अपनेपर आपत्ति होने परभी नही करना चाहिऐ यदि वे अपनी शुद्धिकी इच्छा करें तो प्रायश्चित कराकर यज्ञोपवीत देना योग्य है फिर आपस्तंवसूत्र १--१-२ में लिखता है कि तत ऊर्द्ध प्रकृतिवत्-जों पढियें सेही विगले हुए ब्राह्मण-क्षत्रिय वैश्य है वोफिर प्रायश्चित कर करके अपनी अपनी प्रकृती अर्थात् अपने अपने असली वर्ण को प्राप्त होते है ॥ यहीं आज्ञा मनु महाराज अ० ११ श्लो० ८८ मे लिखते है कि---

सर्वाणि जाति कर्माणि यथापूर्व समाचरेत्

अर्थ--शुध्द हुवा पुरुष पहिलेके तरह अपने वर्णके अनुसार कर्म करैं--यदीमनुजीके कथनानुसार यह सत्य है कि क्रियाहीन सम्पुर्ण-जातियां द्विजातियांही हैं और यदिसत्य हैकि नरआदि गायत्री भ्रष्ट द्विजोंकी व्रात्य संतान है तो यहभीसत्य है जो आयस्तंभसूत्रमें लिखा है यदिकोई अपनी शुध्दिकी इच्छा करै तो उनको प्रायश्चित कराकर यज्ञो-पवीत दे देना चाहिए और विष्णु पुराण के कथनानुसार यह प्रतीत होता है कि:—

क्षत्रियाश्चते धर्म परित्यागात् ब्राह्मणैश्च परित्यक्ता-म्लेच्छतां ययुः ॥

अर्थः--यह सब क्षत्री अपने धर्म के त्याग और ब्राह्मणोंके त्यागसे म्लेच्छ बने और ऋषियों ने इनका प्रायश्चित्त भी कहा अब मै यह कहताहूं कि हे सभासदो ? राजपुत्र के प्रायश्चित होनेमें संदेह ही क्या है. पाराशर महामुनि ७ । ४१ में लिखते है कि:--

देशभंगे प्रवासेच व्याधिषु व्यसने स्वपि रक्षेद्देव स्वदेहादि पश्चाद्धर्मं समाचरेत् ॥

अर्थः--देश के उदद्रव, प्रवास, व्याधि और व्यसन से जिस किस प्रकारसे अपने शरीरकी रक्षा करै । पीछे शांतिके समय में धर्म (प्रायश्चित्त) करलें क्या इसीका प्रायश्चित्त ऋपियों ने नही बताया कि अति असंभव होता हो और हारीत जीने आज्ञा करी है ॥

तेषां प्रायश्चितं मासंपयो भक्षं गामनुगच्छेत् यश्चीर्ण प्रायश्चित्तस्तं वासिष्ठ व्रतैरुयनेयु यथा प्रकृतिर्ऋतुच्छन्दो विशेषात् ॥ (हारीत)

अर्थ—काल पाकर कोई हेतु से जिसका उपवीत भ्रष्ट हुआ उनका प्रायश्चित्त ये है मासभर दुग्ध पान करे और गायकी सेवा करै फिर जनेऊ धारण करे जो कोई हारीत जी की आज्ञानुकूल उपवीत प्रायश्चित करले मास व्रत बाद उनको वसीष्ठजी के वचनानुसार जनेऊ धारण करना उचित है और जिस वर्ण से पतित भया उसी के अनुसार छंद ऋतु होना जैसे ब्राह्मणका ऋतु वसन्त है और इस प्रकार प्रमाण देते हुये राजा रणजीत का प्रायश्चित्त केवल पञ्चगव्य विधान से किया है उसके बाद इसी वंशमें राजा दुवन मलका प्रायश्चित्त भया जब दुवन मलको म्लेच्छ संग अति बलवान भया ये राजा दुवन मलभी रणजीतके वंशमें था उसका इतिहास में उध्दृत किया लेख में इतना विशेष है इनके मन्त्री श्रुत सेन ने दिल्ली में सभाकरके ब्राह्मण और महाराजा की सभामें इनके पूर्वजोंका हाल कहके राजारणजीत के प्रायश्चित का हाल और शुद्धि प्रमाण दिया सभाने राजा रणजीत का हाल सुनके ये कहा राजा रणजीत ने चांडाली से भोग नही किया था और उससे संतान भी नहीं भई इससे उनकी शुद्धि केवल संग दोष परिहरण प्रायश्चित्त दिया गया था अब तो खुद अंत्यजकी पुत्री युवा नाम की जो है उसके साथ में सीकार करते फिर---अब उसके उदर से राजा के चार संतान भई दो पुत्र और दो पुत्री अब हमको ऐसा प्रमाण दीजिए जिससे ये सिद्ध हो जाय की अंत्यजा की साथ में रहकर प्रायश्चित्त हो जाता है ऐसा धर्मशास्त्रका वाक्य बताइये उस महासभामें मित्र शर्म्मानें (देवल) मुनिके वचन सुनाये तब राजाका प्रायश्चित्त भया देवल महात्माने अपने तपो बलसे जो हिंदुवों के उपकारार्थ ब्रह्मसभा में मान्य कराये मानव धर्मानुकूल वाक्योंका संग्रह किया था उन वचनोंको सुनाया वो वचन यह है ॥

वलाद्दासी कृतो म्लेच्छैःश्चांण्डालाद्यैश्च दस्युभिः ॥ अशुभं कारितं कर्म गवादि प्राणिहिंसनम् उच्छिष्ट मार्जनश्चैव तथा तैश्चैव भक्षणम् ॥ तत्स्त्रीणांतथा

संगस्ताभिश्च सह भोजनम् ॥ कृच्छ्रान् त्संवत्सरं कृत्वा सांतपनाच्छ शुद्धि हेत वे ॥ ब्राह्मणः क्षत्रिय स्तदर्धं कृच्छ्रान् कृत्वा विशुध्यति ॥ मासोषितश्च-वैश्यः शूद्रपादेन शुध्यति ॥

अर्थ--ये देवलमुनि वचनानुसार प्रमाण दिया जिसका ये अर्थ है जिनको जबरदस्ती से चाण्डालादिकोंने अपने वशमे करके गोहत्यादि पाप कराये और अपनी जात के वर्तन झूठा और अपवित्र कर्म कराये और उसने उनकी समस्त सेवा करी हो उन म्लेच्छों की स्त्रीसे भोग तथा भक्षण किया हो ये सब संवत्सर व्रतधारी हो के ब्राह्मण, और क्षत्री छ मास करे यही मासोषित वैश्य करै--और ब्राह्मण से शूद्र तो चौथाई करै---और प्रायश्चित्त समयानुकूल दान व्रतादि होता है लिखाभी है ॥

समे समे चयेद्धर्म समे समे चयाद्द्विजाः ॥
तेषां निन्दा न कर्तव्या कालरूपा हिते द्विजाः ॥

अर्थ--जैसा अवसर होवै वैसा धर्म होवै तथा जैसा २ समय होवै वैसाही ब्राह्मण होवै इससे किसीकी भी निन्दा न करै ऐसा सुनके प्रायश्चित्त भया अब सभाका मतलब ये था जिससे समस्त मनुष्यों को मालूम पड़जाय और जातिमें न्यूनता न आवै इस से राजा दुवनमलकी अतिशय सभा करी गई और पूर्ववत् प्रायश्चित्त दिया गया ये वार्ता का समस्त भारतमें सोर होगया इसके बाद में राजा वीरसेनी को म्लेच्छो ने छ मास कैद किया जबरदस्ती इनसे नीचता का व्यवहार किया तब राजा को अतिशय मनमें मलीनता हुई तब ब्राह्मणोंको बुलाया और पापका परिचय देते हुये अपना हाल कह सुनाया राजाका पुरोहित सत्यसेन शर्म्मा था उसने श्रीपाल ब्राह्मण के द्वार प्रायश्चित्त कराया और प्रमाण ये दिया की राजन् देखिये की प्रथम तो धर्मशास्त्र विना हेतुके प्रतीत नहीं होता

है बिना प्रयोजन वेद व्यासजी आदि मुनिजनों ने कभी नहीं लिखा है जो लिखा है सो उसको सच्चाही लिखा है देखो भविष्य पुराणमें खण्ड ४ चौथा अ० २१ वा में है ॥

सरस्वत्याज्ञया कण्वो मिश्र देश मुपा ययौ म्लेच्छान्संस्कृत्य चाभाष्य तदा दश सहस्रकान् ॥ वशीकृत्य स्वयंप्राप्तो ब्रह्मावर्ते महोत्तमे ॥ ते सर्वे-तपसादेवीं तुष्टुवुश्च सरस्वतीम् ॥ पञ्चवर्षान्तरे देवी प्रादुर्भूता सरस्वती ॥ सपत्निकांश्चतान्म्लेच्छान्शूद्रवर्णायचा करोत् ॥ कारवृत्तिः कर[illegible]ः सर्वे वभूवुर्वहु पुत्रकाः ॥ द्विसहस्रास्तदा तेषां मध्ये वैश्याः बभुविरे तन्मध्ये चार्यपृथुनाम्ना कश्यप सेवकः तपसा [illegible] संतुष्टाव द्वादशाब्दात् महामुनिम् ॥ तदा प्रसन्नो भगवान् कण्वो वेद वेदांवरः तेषांचकार राजानं राजपुत्रं पुरं ददौ ॥

अर्थ—कण्व मुनिजी सरस्वती की आज्ञा मानकर मिश्र देशमें गया वहां जाकर दस हजार म्लेच्छों का संस्कार करके उनको ब्रह्मावर्त में लाया इन्होंने देवीजी को तप से प्रसन्न किया बाद वर्ष पांचके देवी प्रसन्न भ[illegible] तब इनको बरदान दिया ये देवीके प्रसन्नता पूर्वक शूद्र वर्णका वर पाया इसके बाद इसमें जो अतिभक्त कर्मेच्छु थे उन दो हजारको वैश्य बनाया गया वेद कर्मके अधिकारी भये उन दो हजार वैश्योंमें से एक [illegible] नाम[illegible] जो था उसने अपने कण्व गुरुजीकी १२ बार ह वर्ष सेवा [illegible] तब [illegible] हुए वेदवेत्ता मुनिजी ने इनके आचार से इनको क्षत्री बनाया और

राजपुत्र नामका नगर दिया गया यही मगध राज्यकी प्रथम सीडी है (मूल पुरुष है) सत्यसेन राजगुरुके सामने मुखकरके कमिटीमें श्रीपाल शर्म्मा ने सुनाया की राजन् तत्वार्थको देखिये और कर्मकी महिमाको विचारिये आपसे तो जबरदस्ती करी गई हम आपको प्रापश्चित्त देके आपके इहां पट्टा सहित ब्रह्मचारियोंके भोजन करैंगे इसी रीतिको देखके जो प्रामाणिक जन जो हिंदू धर्मानुयायी थे खुश हुए और सुरसेनिके पुत्रका प्रायश्चित्त कराया इनके पुत्रका नाम वीरसेनी है॥ सभासद ब्राह्मणोनें कर्मको प्रधान मान के धन्यवाद दिया ये प्रायश्चित्त दिल्लीमें कराया गया दिल्लीके प्रधान राजमंत्री ने सुखसेनेको आज्ञा करी और राज्यभरमें घोषणा करी (ढंढोरा बजवाया) की वृषकी संक्रांतिके सात अंशके दिन वैशाख सुदी ३ होगी उसरोज महाराजका प्रायश्चित्त होगा जितने ब्राह्मण म्लेच्छ संगमे तथा सिपाई पेसा आदि राजाकी साथ मा पकडे गये थे उन सबकी हरिद्वारमें शुद्धि होगी ये सभामें निरधारण भया है. ये लेख सुधन्वा ने अपने पुत्री के प्रायश्चित्त देने के समय में दिखाया है। जब राजसभा में सुधन्वा की पुत्री कीर्तिमती के ऊपर बलात्कार से मैथुन करनेका दोष लगाया तब म्लेच्छों ने हल्ला किया कि इसका विवाह जातिमें नहीं होगा. तब सुधन्वा ने सभा करके इस लेखको पेस किया. जिसको वीरसेनी ने अपने अर्थ प्रायश्चित्त शुद्धिसभामें मान्य किया था. तब ब्राह्मणोंने विवाह जाति में करलिया. कीर्तिमती का प्रायश्चित किया? ये राजा सुधन्वा की ज्येष्टा पुत्री थी. इसके बाद में राजा शित्रपाल जिसको कलिभीम कहते है. इसकी पुत्री को बहुत रोजसे सिकारका शौक था और राज मंत्री भीम के नोथे उनकी सादी म्लेच्छ कन्या से भई थी. जब भीमकी पुत्री श्रुतसिला कौमारी को गर्भ का दोष लगाया और राज मंत्री जो भीमके थे. उनका नाम अजय पाल था. उसने म्लेच्छोंकी कन्या किरातिनी से सादी करी। जब प्रजागण मध्य में अति कोलाहल भया तब राज मंत्री ने सभा करी. और

ब्राह्मणों के मध्य मे यह विचार हुआ. कि जब श्रुतिशीला गर्भसे थी और अजयपाल की दोनों स्त्रियां जब कुमारियां थी इन कन्याओं को चिद्घनानन्द और चैतन्य भूषण इन दोनों ने मंत्र दिया त्रिदंडी और ब्राह्मण जयदेवी के गुरू पूज्यपाद चैतन्य भूषण (इसकाही दूसरा नाम विष्णु शर्मा है) चिद्घनानन्द त्रिदण्डी ने गर्भ की अवस्थामे श्रुतिशीला को विष्णु दीक्षा दी. इससे प्रतीत होगया है कि ये कौमारियां शुद्ध होगई थी. कभि बिना प्रायश्चित्त के भी ग्रहण होता है. बिना शुद्धि के इन को दीक्षा का देना और इन्हों के हाथ का भोजन करना असंभव था. इसी को संमझ के राजा उदयपाल ने गर्भवती श्रुतिशीला का पाणि ग्रहण किया. और यह भी कहा कि कुमारी अवस्था में जो संतान होति है विवाह होने के बाद वो संतान उसीकी होती है. श्रीकृष्ण चन्द्रजीने कर्ण से कहा था कि तुम महात्मा पाण्डुके पुत्र हो. इसी विषय को लेकर मैं श्रुतिशीला के साथ विवाह करता हूं ऐसा कहकर राजा उदयपालने उस के साथ विवाह किया इसके जो दो पुत्र थे एक हीमंत दूसरे का नाम कीर्तिमंत था. इन दोनेने राजा भीमके मंत्री अजयपालकी जो दो पुत्रियां म्लेच्छकी कन्या से और व्याधकी कन्या से उत्पन्न हुई थीं उन्होंसे सादियां करलिये. ये वार्ता विष्णु सूरिजी ब्राह्मणने अपनी लड्की के प्रायश्चित्त देने के समय मे विस्तार पूर्वक अपने नामके ग्रंथ में लिखा है विष्णुसूरिजी की कन्याका नाम रंभा था रंभा के विवाह के समय मे शुकदेव शर्म्माने बहुत से प्रमाण देते हुए भविष्य पुराण में खण्ड ३ अ० ३४ में जो पतितों की और चाण्डाल किसका नाम है यह प्रमाण दिखाया है यहां ग्रंथके विस्तार के भयसे खाली हवाला दिया हूं ये प्रमाण जो शुकदेव शर्म्माने दिये है वो दूसरे प्रायश्चित्त के उदाहरण में आवेंगे. जब कलिको आये हुए २००० दो हजार ६०० छ सौ वर्ष हुये थे. उस समय में विक्रम बुद्धि नाम राजमंत्री था इस के पुत्र वसुसेन ने शूद्र के सकाश से ब्राह्मणों मे उत्पन्न हुई उजला नामकी लडकी से विवाह किया. और लिखा भी है ॥

ब्राह्मण्यां शूद्र संसर्गा ज्जातश्चण्डाल उच्यते ।

अर्थः-पुराण इतिहासों से प्रतीत होता है कि कभी बिना प्रायश्चित्त विधिकेही चाण्डालादिकों को शुद्ध मानकर आचार्य और मठाधीश बनाये गये. जिनका जन्म शूद्र सकाश से ब्राह्मणी में भया है उनको चांडाल कहते है औशनस मुनिभी इसी बातको कहते है की शूद्रसे ब्राह्मणिमें जो पैदा होता है वोही चांडाल होता है ॥

उदाहरण-

विक्रमादित्य राज्येतु द्विज कश्चिदभूद्भुवि व्याध-कर्मेति विख्यातो ब्राह्मण्यां शूद्रतोऽभवत् । त्रिपा-ठीद्विजश्चैव भार्या नाम्ना हि कामिनी ॥ मैथुने-च्छावती नित्यंमहा घूर्णित लोचना ॥ ४ ॥ द्विज सप्तशती पाठे वृत्यर्थंकस्यचिद्गत· । ग्राम्ये देवलके रम्ये बहुवैश्य निषेविते ॥ ५ ॥ तत्रमासगतः कालो नाययौच स्वमंदिरे । तदानु कामिनी दुष्टा-रूप यौवन संयुता ॥ ६ ॥ दृष्ट्वा निषादं सबलं काष्ठ भारोपजीवितम् । तस्मै दत्वा पंचमुद्रा बुभुजे काम पीडिता ॥ ७ ॥ तदा गर्भं दधौसाच व्याधविर्येणसेचितम् ॥ पुत्रोऽभूद्दशमासान्ते जात कर्म पिना करोत् । द्वादशाब्दे गते कालेस धूर्तो वेदवर्जितः ॥ ब्याधकर्मकरोनित्यं व्याधकर्मायुतो ऽभवत्। निष्कासितौ द्विजेनैव मातृ पुत्रौ द्विजा धर्मौ

त्रिपाठी ब्राह्मचर्यंतु कृतवान् धर्मतत्परः । निषादस्यगृहे चोभौवने गत्वोषुतुर्मुदा ॥ प्रत्यहं जार भावेन बहु द्रव्य मुपार्जितम् । व्याधकर्मातु चौर्येण पितृ मातृ प्रियंकरः ॥ कदाचित् प्राप्तवांस्तत्र द्विज वस्त्र समुद्गतम् । श्रुतमादि चरित्रंहि तेन शद्ध प्रियेणवै ॥ पाठपुण्य प्रभाबेण धर्मबुद्धिस्ततोऽभवत् ॥ दत्वा चौर्य्यंधनं सर्व त्तस्मै विप्राय पाठिने । शिष्यत्वम गमत्तत्राक्षरमैशं जजापह ॥ बीजमंत्र प्रभावेण तदंगात्पापमुल्वणम् । निसृतं कृमिरूपेण बहु वर्णेन तापितम् ॥ त्रिवर्षान्तेच निष्पापो वभूव द्विज सत्तमः । पठित्वाक्षरमालांच जजापादि चरित्रकम् ॥ द्वादशाद्बमिते काले काश्यां गत्वातु सद्विजः अन्नपूर्णां महादेवीं तुष्टाव परयाऽमुदा ॥ साइत्यष्टोत्तरेजप्त्वा ध्यानास्तिमित लोचना । सुस्वापतत्र मुदिता स्वप्ने प्रादुरभुच्छिवा ॥ दत्वा तस्मै ऋग्विद्यां तत्रैवान्तर धीयत । उत्थाय सद्विजो धीमान्लब्ध्वा विद्या मनुत्तमाम् ॥ विक्रमादित्य भूपस्य यज्ञाचार्यो वभूवह ॥

अर्थः—ये वही प्रमाण है जो शुकदेवने कहे थे. मगर आगेके प्रमाण जब दो वक्त आते है. उनको एक जगह लिख देते है. पुस्तक ज्यादा हो

जायगी रंभा के सादीके वक्त यही प्रमाण दिया था शुकदेवने अब विक्रम बुध्दि राजमंत्री ने जब देखा की लडका बिगड गया उसने चाण्डाली से सादी कर ली. इस वात से राजमंत्री अनमना रहता था । उनके पास एक रोज सत्यशेखर शर्म्मा ब्राह्मण आये. कुशल प्रश्न बाद उन्होंने अपने अपने मित्रको पूंछा आप अनमने से दिखते हो उन्होंने सत्यसेन से अपना हाल कह दिया तब सत्यसेन ने ये कहा हम तुमको निःसंदेह कर देते है. तब अपने मित्रके आगे रंभा का विवाह का हाल और शुकदेव के कहे हुए भ० पु० वचनों को सुना दिया तब उसका संदेह दूर भया. अब न तो चाल मानते है न धर्म, भेडिया चाल पड गई है. कैसी अच्छी बात करते है. वाहवाह स्याबास है. यह वचन हमने बिना अर्थ के नहीं कहे है ॥ मै तुमारा मित्र हूं इसकी चिंता छोडिये अब अर्थ भाषामें दिखाते हैं. एक ब्राह्मणी ने यौवन में अपनें पति को घरमे न पाया वो दुर्गापाठ में एक मास से गया था. उसने पांच रुपये देके एक लकडी बेचने वाले व्याधको रक्खा उससे गर्भ भया पीछे उसको पिसाची चालमे देखके बेद भ्रष्ट सत्कर्म से बाहर कुकर्म रत देख माता और पुत्रको घर से निकाल दिया उसने जाकर व्याधके घर में जारणी के तरह रहना सुरू किया. इस को ब्राह्मण से आज्ञा भई. और शिव मंत्र जपा फिर तीन वर्ष में पाप रहित भया और काशी गया ऋग्वेद पढा और देवीजी की कृपासे वो विक्रम राजाकी यज्ञका आचार्य्य बना. इसने बडी उच्चता पाई. अब देखिये ये क्या चाण्डाल नहीं था इसी तरह बहुत सी जगह बिना शुध्दि के भी ग्रहण भये. आपका लडका और बहु तो वेद पाठ तथा अग्निहोत्र करते है. राम मंत्र का उपदेश हुआ है. और जाति ग्रहण भया हुआ है देखिए जाति गंगा गरीयसी आपके लडकेका विवाह किस चाण्डाली के पुत्री के साथ भया है. तब मंत्रीने कहा शूद्र से ब्राह्मणी में पैदा भई थी. ऐसी लडकीसे भया। तब ब्राह्मण सत्यसेनने जबाब दिया मंत्रीजी आप इस वातका ख्यालमत करिये राजा शांतनुने धीमर की लडकी से सादी करी है ॥ धीमरको शास्त्रमें चाण्डाल माना है मगर लडकी तो कभी भी दुष्य नहीं होती क्योंकि वह

दूसरे घर जाती है विद्या और स्त्री तथा रत्न ये दुष्कुल से भी ग्रहण कर लेना और पराशरजी तो कहते है स्त्रिया मद्यानु सर्वदा (अर्थात् औरतकी जाति कभी भी अपवित्रता को नहीं प्राप्त करती है) अब मनुजीका प्रमाण अ० २–२४ ॥

स्त्रियो रत्नान्यथो विद्या धर्मशौचं सुभाषितम् ।
विविधानिचरत्नानि समादेयानि सर्वतः ॥

अर्थः—स्त्री रत्न विद्या शौचधर्म सुभाशित तरह २ के रत्न अर्थात् अच्छी २ चीजैं) जहांसे मिलैं ले लेना ये बात विभूति अवस्था की है क्योंकि जो विशेष विभूति है वो विष्णु अंश है ये गीतामें लिखा है तथा अ० ११ में हैं ब्राह्मण चार वर्णकी स्त्री से विवाह करता है तथा याज्ञयल्क्यादिनें मनुकी आज्ञा पालनका निषेध किया तथा पूर्वके जन मनुकी आज्ञा पालन करनेसे अधःपतित नहीं भये याज्ञवल्क्यदि विवाह विधि निषेधका पालन करनेसे स्त्री रत्नकी प्राप्ति न होनेसे धीरे धीरे गिर गये ॥ किंतु स्त्री रत्नको प्राप्ति करनेसे जातिच्युत किये गये मनुका सिध्दान्त ये है कि मनु० ९–२२ ॥

यादृक् गुणेन भर्त्तास्त्री संयुज्येद् त्यथाविधि ।
तादृग्गुणा साभवति समुद्रेणव निम्नगा ॥

अर्थ—स्त्री जैसे गुणवान् से विवाही जायगी वैसीही होजायगी जैसे समुद्रमें गंगा आदि जिनका जल अमृत तुल्य था वो सब खारी बन गई है इसी बातको पुष्ट करते हुए मनुजी कहते है ॥ मनु० अ० ९–२३

अक्षमाला वशिष्ठेन संयुक्ता धमयोनिजा । शारङ्गी मन्दपालेन जगामाभ्यर्हणीयताम् ॥

अर्थः—अधम योनिमें अक्षमाला का जन्म था और भी ऐसीहि थी ये दोनो पूजाके योग्य भई ॥ अक्षमाला वशिष्ठके साथ तथा शारङ्गी

मन्दपाल के साथ विवाह भया ऐसेहीं महाराज शान्तनुजीने कहार (धीमर) की कन्या को देखके कहते है अयि सुन्दरी मृगनयनी मेरे घरमें कोई स्त्री नहीं है तथापि हे मोहिनी मैं तुमको पट्टरानीका दरजा दूंगा ये बात देवी भागवत स्कंन्ध २ अ० ५ में है और प्रसिध्द इतिहास येह है धर्मशास्त्रमें येह सब चाण्डाल बताये है अत्रिजीनेभी २९५ इन सभोको चाण्डाल बताया है व्यासादिने भी व्यास स्मृति १-१० मे ऐसाही कहा हैं अब कहिये ये सब चाण्डाल थे कि नहीं ऐसा सत्यसेनने अपने मित्र विक्रम बुध्दिसे कहा है की ब्राह्मण को चार वर्णकी कन्या तथा क्षत्री को तीन वर्ण की कन्या बनिये को दो वर्ण की कन्या तथा शूद्र अपने कुलमें विवाह करैं ऐसा मनु आदिका प्रमाण है मगर अन्य जाय करले विवाह जैसा राजा शान्तनुनें किया था ऐसा करनेसे पतित नहीं होता है जो अत्यज मनु व्यासादिने कबूल किये है वो सब हमारेही साथमें सामिल है॥ ये देशाचार वशसे कही रसोई पानी आदिका काम करते है॥ अब आपका संदेह दूर भया होगा इस कथाको विक्रम बुध्दिनें सुनके कहाकि हे विप्र आपको अभय प्रधान पुण्य मिला है मेरे मनका संशय दूर भया है॥ संदेह दूर करनेवाले को जैसा पुण्य मिलता है येह प्रसंग श्रीमद्भागवतमें मैत्रेयके पासमें विदुरजीने कहा है अभय प्रदानके समान कोईभी पुण्य बराबरी नहीं करता है॥ ये इतिहास प्रायश्चित्त तेलगु इतिहासमें लिखा गया है॥ और कर्मविवेक जिन्होंने पठन या श्रवण किया है उन महात्मावों को ऐसी दुर्घटना रूपी दुःखदायी विवेचना प्रगट नहीं होती है॥ तेलगु रामलिंगईया इतिहासमें तथा कर्म्म विवेक इनको देखनेसे सब कथा एक तरह मालूम देती है अब और अति मनोहर संशय विदारण वार्ता पठन करिये वो येह मुनि वाहनजी दूसरानाम योगीवाहन येह जाति चाण्डालथे इनकी वार्ता और आचार भक्ति महिमा तथा कर्मकी ही प्रथा उच्च मानी गई है येह कथा प्रपन्नामृत ग्रंथमें लिखी है एक मनुष्यका बालक धानके खेतमेंसे चाण्डालको मिलाथा उसने उसका पालन कियाथा वो लड़का श्रीरंगनाथजी का

भक्त भया था इसको सामने खड़ा देखके जल भरते हुए पुजारीनें इसको मारा क्यों कि सेवाके जलको चाण्डालने देखा है इसके रुधिर आया तब मंदिर के किवाड नहीं खुले बोहतेरा यत्न करके थक गये आखीर हारकर वैष्णवोंमें हल्ला भया तब भगवतने आज्ञाकी जल भरते हुए पुजारीने जिसको पत्थर मारा है उसको लावो नहीं लावोगे तो किवाड बंद रहेगा तब वैष्णव ब्राह्मण सभ मिलकर उसको कंधे ऊपर चढाके मंदिर में लाये तब मंदिर खुला. पूजा भई अब आपकी जाति प्रधानता होती तो श्रीभगवत् ऐसी आज्ञा क्यों देतेथे जन्म जाति प्रधानता होती तो विष्णु भगवान् उनको क्यों ग्रहण करते थे अब आपलोग जो जन्मसेही जाति ग्रहण मानते हो जन्मसे उच्चता ग्रहण करते हो और वेदोंको दोष देते हो आपका कथन सत्य होता तो भगवान् ऐसा कभी हुकुम देते थे की आपलोग कंधे ऊपर उसको बिठा लावोगे तब पूजादि ग्रहण करूंगा ॥ ये कथा आपलोग प्रपन्नामृतमें देखो और धनुर्दासतो शूद्र था इसको श्रीरामानुजजयरस्वामीजीनें एक रोज स्नानके बादमें इसका हाथ पकडकर ग्रहण करते हुए चले आयेथे येह देख ब्राह्मणोनें कहा हमको नीचा दिखाया उसके हाथको ग्रहण क्यों किया इसका जबाब यह दिया यह तुमसे उत्तम है ॥ श्रीमान् पूज्यपाद रामानुजजीने इसका कर्म्म ग्रहण किया है जाति ग्रहण कारि नहीं है उसी प्रपन्नामृतमें श्री शठकोप स्वामीजीका प्रभाव तथा बारा आल्वार पूजाका प्रचार और जैसे विष्णु मूर्तिपूजा की महिमा है इसी तरह बारा आल्वार और सठकोप स्वामी प्रभृतियोंका पूजा प्रचार लिखा है अभी आप भक्तजनोंकी महिमा और कर्म्मकी ऊंचताका हाल कहांसे जानोंगे पठन तुम्हारा चरस, भंग, गांजा, और तोता मैंनाका किस्सा जादा चाल कहानियोंकी है ब्राह्मणोनें वेदोंका पठन नहीं किया और कर्म्म चुल्हा फूंकनाहीं समझा है जादासे जादा क्या लिखूं लज्जा आती है चिलम चूसने लगे है जिस मुहसे वेदोंको रटते थे उस मुखसे अब चूल्हा फूंकते है गायत्री याद नहीं है संध्या भी जानते नहीं दूसरेको दोष देते है रामानुज स्वामीजीका मत तो शूद्रसे प्रचलित है जैसा पुराण सूतजीसे

पठित है इसी तरहसे सब काम में गुण कर्म्महीं प्रधान माना है अब ब्रह्मचारीजीका महिमाका हाल सुनिए इन्होंनें तो कान्धा नामके चमारको मंदिर में बुलाया और दर्शन कराया ये कथा रणवींर भक्ति रत्नाकर में लिखी है ॥ ये वार्ता भक्तमालमें तथा भक्तिमानोदिपीकामें मनोहर चिंतामणींकार लिखता है गोकुलनाथजीनें कान्धाको मंदिरमें झाडू देना और कुठारका काम देखने की आज्ञा दी तब तो कोलाहल भया बादमें गोकुलनाथजीनें कहा ॥

श्वपचोऽपि वरश्रेष्ठो न विप्रो वेद पारगः ॥

अर्थ-ऐसा कहके आज्ञा दी सब बैष्णवोंने कृपानाथ २ कह के सामिल किया सहित कुटुंबी रहगया शूद्राचरण करता रहा श्लोकका अर्थ येह चाण्डाल अच्छा है जो भक्ति करता है वेद पढा ब्राह्मण उसकी बराबरी नहीं करता है ऐसा प्रमाण दिया तिसमें पंचगव्य पान करा दिया और गोष्ठी सामील भया विष्णुदास नामसे पुकारा गयाथा कान्ध चमार की वार्ता कही कुछ कही कुछ है ॥ मगर मिलाना साबूत है अब आपलोग जन्मसे जाति मान लेनाही सच है फिर जन्म संस्कार की विधिका क्या काम है जिस कुलमें जन्मा है ॥ यही मन्तव्य है अब अप लोगोने ऐसाही कर रक्खा है जिससे आपना सर्व नाश भया जाता है और दिनों दिन हानियां होती हैं बड़ी दुर्घटनाके साथ भोगी जा रही है स्वतः प्रमाण में क्या प्रमाण है वेदोंका पठन तो कहां था बल्कि आप सबोंको तो नामतक भी मालूम नहीं है अब आप कहते हो हम ब्राह्मण है हमारा हक है आपसे दापा लिंये बिना कैसे बनैगा सिध्द छन्यात जणा होसी गुरांने चुकाय देवोला अब आप भोले भाले ऐसे होगये की मेहनत उठाकर कुमाये हुये वैश्य धनके लूंटरे हो बैठे जो कभी भी कहीपर आप ब्राह्मणोंसे येह पूंछा जाय कि गुरुजी हमको वेद पढावो तब आपसे जबाब मिलता है वेद मंत्रका तुमको अधिकार नहीं है इससे ज्यादा क्या बतावैंगे ॥

दोहा-जब खुदही चौपट नाथ बने तब,
औरनकी सुधि कहांसे लहिए ॥

प्रकाल स्वामीजीका दिल भगवद्भक्तोंकी सेवामें ज्यादा था सदा श्रीरंगनाथ जीका कैंकर्य करते थे और वैष्णवोंकी सेवाभी करते थे एक दिन इनके पासमें विष्णुदासका आना हुआ वो रास्तेके मुसाफिरों को लूटा करता था और डाका मारताथा येह हाल विष्णुदासने सुनाकी प्रकालजी भी डाकू है और माल और धन सब सेवामें लगाते है ऐसा करनेसे भगवानने दर्शन दिया है (और इसकी जन समुह वार्ताभी करते है) अयसी कथा सुनके विष्णुदास गया उसने अपना धन सब प्रकाल स्वामीजीको देकर विष्णुदास नाम पाया ये पूर्वमें बिटंक नामका चाण्डाल था इसकी माता भिल्लनी थी ये भिल्लनी श्रुत बोध नाम के वैश्यके घरमें रहती थी ॥ एक रोज इसने श्रुतबोधकी स्त्री का वस्त्र पहनकर कामोन्माद होकर अतिशय प्रीतिमें फंसकर वैश्य कान्तिभूषण से मिलगई ये बडेही वलिष्ठ थे और वीरभी अति थे इनसे भिडी दैवयोग गर्भ भया तब ये विटंक नामका पुत्र मिला इसकी सेना विटंकथी जब ये प्रकालजीका चेला भया तवसे ये सब ब्राह्मणोंने इनको अपने साथ सामिल किया सहित सेनाके हरिभक्त नामसे तथा विष्णुदास विष्णु भूषण ऐसी नामावलीसे इनकी वार्ता मिलती है येहि जातिवाले रामानुज स्वामीजीके साथमें दिल्ली गये और इनको भी स्वामीजीनें प्रधान किया येह कथा भी प्रपन्नामृतमे है जब संपत भगवानजीको लाये थे तब प्रधानजी खुद धनुषधारी बने थे इसमे लिखाहै युवती नामकी बादशाहकी वेटीकोभी साथ लाये और उसके भाइकाभी उधार किया और कहा तुम जगदीश चले जावो तुमारा उध्धार जगदीश भगवानके दर्शनसे पतितपन दूर होगा. और कोइ जगह नहीं है क्यों कि पतित पावन उनका नाम है ऐसा करनेसे विष्णुदासकी तुल्य तुमभी बनोगे तब इसने वैसाही किया बादमें संपत भगवानजीकी सेवामें रहा और इनको विप्रगोष्ठीमें सामिल रखाथा रामानुज स्वामीजीनें जैसा वेदार्थ दिखाया है उसकी विचित्र गति है जब उनके चरित्र पठन करते है तब जातिको धूलांजलीसे विभूषित करना पड़ता है जो जो उनके मार्गमें पुरुषोत्तमकी कृपासे चले गये है वो सब जीवन मुक्त है । हम इस बातको जोरसे नहीं लिखते थोडासा हाल हो तो लिखे तो

भी अच्छी वार्ता होनेसे लिखनी चाहिये रामानुज स्वामीजीके आज्ञा निर्वाहक लाखो मनुष्य है एकरोज स्वामीजीनें मंत्रको गोपूरके ऊपर चढकर उच्च स्वरसे पुकारा तब सभ मनुष्योंके कानोमें आवाज आई अब आप इस बातका जबाब देवें ब्राह्मण लोग बोलते है वेद पढनेमें मंत्र भाग जो है उस मंत्रको ब्राह्मणोंसे इतर जातिका अधिकार नहीं है फिर रामानुज स्वामीजी तो उभय वेदान्त प्रवीणथे उन्होनें ऐसा काम क्यों किया है इस आचरणसे सबका अधिकार वेदमंत्रमें पाया गया मंत्रोच्चारण वादमें इनके गुरूने पूंछा मंत्रको क्यों पुकारा तब स्वामीनें जबाब दिया कि इसमें हमको क्या दोष भया तब रामानुज स्वामीजीको जबाब मिला कि तुमको नरक होगा फिर स्वामीजी अपने गुरूजी को बोले जिन्होंने मंत्र सुना है उनका क्या हाल होगा तब रामानुजसे गुरूजी बोले उनको मोक्ष मिलेगा तब रामानुज स्वामीजीने जबाब दिया मुझे अकेलेको नरक होगा तो हो जाय औरोंकीतो मुक्ति हो जायगी ऐसा जबाब रामानुज स्वामीजीसे सुनके उनके गुरूजीने कहाकी आप ऐसे उपकारी जीवको हमेशाही आनन्द रहता है अब आप कहिये दोनों संवादसे क्या सार निकला वेद मंत्राधिकारी जीव मात्र है और एक बात मूर्खोंको भी नजर आती है कि बिना कर्मके कुछभी नहीं है देखिये पत्थर लकडी लोहा आदि धातु उपधातु जब संस्कार हो जाता है तब सब चीज क्या २ मोल्य पाती है जब चैतन्यका संस्कार हो जाता है तब देखिये कैसा आनन्द पाता है ज्ञानवान ही विशेष मान पाता है जैसा शौनकादि मुनियोंसे सूतजीने पाया और निषादने तथा हनुमानजीने बिभीषणजीने शबरीने रामचन्द्रजीसे मिला अब आपलोग जाति जाति पुकारते है सोई हम भी पूंछते है क्या जाति है ॥ लड़की जाति है या दुलहन जाति या वस्तु विशेष जाति है बतलाइये तो सही मान्यवर भारत भूषण दयानंदजीके तथा लोकमान्य तिलक गांधीजीके वचनोका अनुकरण सब करै तो आजही भारतका पूर्व रूप हो जाय कारण यह अब राज्यधर्म अच्छा है ब्रीटिश राज्य है इस लिये तुमको अच्छाही काल मिलगया है रावणादि के राज्यमें भयसे हवि पात करते थे तब भी आप कर्म

को ही प्रधान मानते थे अब क्या पत्थर पड़े है उस काल कठोर अवस्थामें तो धर्माचरण किया करते थे अब अच्छा अवसर है क्यों नहि करतें रावणादि तो धर्मचारियोंको खा जाया करते थे अब तो आप देख रहे हो कैसा अच्छा राज्य है जराभी भयका काम नहीं हैं जो मनुष्य अवसरमे कर्म्मो पार्जन से हात उठाता है बो मलीन हो जाता है ॥

जन्मना जायते शूद्रः संस्कार द्विज उच्यते ॥

अर्थः—जन्मसे शूद्र पैदा होता है जब संस्कार होता है तब ब्राह्मणादि वर्ण कहा जाता है अब आपही विचारें जब धातुवोंका संस्कार हो जाता है तब नामांतर होता है जैसे पीतलकी थाली लोटा इत्यादि नाम ऐसेही लोहे आदिका नाम संस्कारसे बदल जाता है ब्रह्म प्रजा शूद्र नहीं होती है ॥ इसलिये कर्मकोही प्रधानता दिखाई गई है जो कहो कलिमे पराशरकाही मान्य है क्यों कि कहा है ॥

कलौ पराशर स्मृतिः ॥

अर्थः—अब कलिमें तो पराशर स्मृतिकाही प्रमाण है ठीक है हम कब कहते है कि पराशर स्मृति मत मानो परंतु साथमें गीताजीका प्रमाण तो मानो श्रीकृष्णजीने कहा है ॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठ स्तत्तदेवेतरो जनः । सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्तते ॥

अर्थ—रामानुजस्वामी रामानन्दस्वामी मध्वाचारी स्वामी शंकराचार्योजी ये सब कलियुगमें भये है इन्होंकी सेवामें सकल हिंदू है ये सब भारतोद्धार के अर्थ प्रादुर्भाव भये है इनके मतानुयापी होकर भी अंधे हो रहे है जिन्होंकी सेवामें मूढवत् पागलपन करते हो जिन्होनें अपने अर्थ कुछभी कहा नहीं है सब उपकार किया है ॥ नित्य सुरिजी तथा भक्तांघ्रि रेणु स्वामीजी

स्तुती पाठमें लिखते है धन्य शंकरादि रामानुजादियोंको जिन्होंनें किरात हूण निषाद जातियां विप्रोत्तम मानी है और गोष्टीमें सामिल किये प्रकाल स्वामीजीने डाका मारना शुरूं किया और डाकुवोंको अपनी जातिमें सामिल किया वो जाति द्राविड देशमें अपवित्र मानी जाती है और उनको प्रकाल स्वामीजीने मजुरी देनेके वक्त पूंछा तुम लोग मजूरी लेवोगे कि वैकुण्ठ उन्होने कहा वैकुण्ठ तब सबको नौकामें बैठायके कावेरीमें डुबो दिया धोखा दिया बादमें उनके वारिसोंने प्रकालजीको कहा हमारे आदमियोंकी ऐसी गति क्यों कि जब आपके पासमें मजूरी न थी तब डुबोया क्यों उन्होंने कहा अपनें २ आदमियोंको पुकारकर पूछों तब उन्होंने पूछा तब वो लोग बोले हम सब प्रकाल स्वामीजीकी कृपासे वैकुण्ठ लोकमें है हम सब खुशी है. अब देखिए कर्म्मको प्रधानता है की नहीं और देखिए जो डुबके मरते है सो भी प्रेतयोनिमें जाते है इनको तो वैकुण्ठ दिया गया वो भी डाका मारनेवालेने दिया है ॥ अब देखिये कर्मकी प्रधानता कैसी गहरी है वो येह है धर्मचार प्रकारसे रहता है ॥ सामान्य धर्म १ विशेष धर्म २ विशेषतम्धर्म ३ विशेषतरधर्म ४ प्रकाल स्वामीजीने विशेषतर धर्म ग्रहण कियाथा जिस धर्मसे सब साधना पूरी होती है वो धर्म विशेषतर है यही विशेषतर धर्म रामचन्द्रजी के छोटे भाई शत्रुघ्नजीनें दिखाया है उसी धर्मको चार संप्रदा निर्वाहक आर्य्योंने दिखाया है जिन्होनें असंख्य मनुष्योंको पवित्र किया शंकराचारीजीने तो सामान्य धर्मसेही जाति भ्रष्ट बौद्ध धर्मानुयायी ब्राह्मणादि वर्णोको पवित्र किया और धर्म मार्गमें प्रवीण किया है ॥ उनको पुनः संस्कार करके वर्णाश्रम धर्म दिया है और भी ये दिखाया जब भगवत शंकरके सामने आके प्रार्थनाकी और ये भी कहा प्रजाने हे शंकर हमको आप वर्णाश्रम धर्मकरनेकी प्रायश्चित्त विधि दीजिये तब शंकराचार्यजीने उन सबोंको स्नान मात्र कराके प्रायश्चित्त दिया जावो जनेऊ पहन के धर्माचरण करो अब आप बताइये विधिका विधान तो सब उलटा भया है वर्णाश्रम सबको मिला

प्रायश्चित्त कुछभी नहि भया है अब यहां सब तरहसे शंका आई है ॥ जब प्रायश्चित्ती आवै तब तो सभा करै (पंचायत करनेके बाद प्रायश्चित्त करै) शंकरने धर्मशास्त्रका उल्लंघन किया है त्तउर उल्लंघन कदापि नहीं किया है देखिये सभाका शासन और हमारा प्रयोजन यहांपर एक श्लोकसे निकलता है इस लिये सब श्लोकोंका लिखना वाहियात काम है ॥ इस लिये हमने सब श्लोकोका प्रमाण नहीं लिखा है ॥

शास्त्रोऊल्लंघनमे प्रमाण येह हैः—

बृहत् पाराशर ॥ ६ ॥ ७२ ॥ निष्कृतौ व्यवहारेच व्रतस्याशंसने तथा । धर्मवायदिवा धर्मं परिषत् प्राहतद्वदेत् ॥

अर्थ—निष्कृति (शुद्धिके करनेमें) व्यवहारमे व्रतमें पंचायत जो धर्म अथवा अधर्म बतलावै उसको मानै शंकराचार्य्यजीने इसका पालन क्यों न किया अपने मर्जीसे स्नान मात्र करा दिया और जनेऊ डालके शंख बजा दिया ऐसी शंका तो वो लोग करेंगे जीनोंने थोडासा पढलिया और शंकराचार्य्यजीनें तथा दयानंदजीनें बृहत् पाराशरके अ० ६ में जो प्रमाण है उसकोमाना है अब भी दयानन्दजीके अनुयायी इसको ही मानते हैं वो श्लोक येह है ॥ शंकराचार्यने शास्त्रप्रमाणितसे प्रायश्चित्त दिया है ॥

प्रमाणः—

बृहत् पाराशर अ ६ बेद शास्त्र विदो विप्रा ब्रुयुः सप्तपंचवा । त्रयोवापि सधर्मस्या देको वाऽध्यात्मवित्तमः ॥ शयनं नियमं वापि उपवासादिकं चयत् । तद्गिरा परिपूर्णास्यात् निष्कृति र्व्यवहारिकी ॥

अर्थ—देशके वेदवेत्ता जहां ब्राह्मणहोवे उसका नाम सभा है वेदादि शास्त्रकै जानकार सात पांच तीन एक मत होकर जो धर्म कहै और अध्यात्मवेत्ता एकही जो कहै वोहि धर्म है अब देखिये शंकराचार्य्य रामानुज तथा इतर जो उनके बाद चार संप्रदायोंके स्वामी लोग तैसेहि इस समयमें दयानंद तिलक आदि जो भये है ये सब भारथोद्धारके अर्थ हुये थे यह सब जीवन मुक्त है येह जैसा कहे गये है वोही धर्म है ॥ और मनुजी भी अ० १२-११३-१११ से ११३ आखीर यही कहा है ॥

एकोऽपि वेद विद्धर्म यद्यवष्ये द्विजोत्तमः। सविज्ञेय परोधर्म नाज्ञानामुदितो युतैः ॥ अव्रता नाम मंत्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् । सहस्रसम वेतानां परिषत्वं न विद्यते ॥

अर्थ—वेदका जाननेवाला ब्राह्मणोंमें जिसका मान्य होवो जो कहैगा वह परमधर्म है बिना वेद पढे उपदेश जो देते है और आर्य्योंको अनार्य्य कहै ऐसे ब्राह्मण दशहजार भी सभामें काम नहीं देते है और जाति अभिमानियोंको सभासे निकाल देना चाहिये ॥ मनुजी कहते है इनसे काम नहीं लेना इनसे सभा नहीं होती है ये वेदहीन है और घमंडी है इसी मतको बृहत् पाराशरजी अध्याय ६ श्लोक ६८ मे कहते है ॥

नसावृद्धैर्नतरुणैर्नसुरुपैर्धनाचितैः । त्रिभिरेकेन परिषस्त्यात् विद्वाद्भिर्विदुषाऽपिवा ॥

अर्थ—धर्मके निर्णयमें वृद्धोका जवानोंका धनियोंका काम नहीं हैं या एकही वेद शास्त्रका जाननेवाला हो तो विचारके प्रायश्चितदेनेकी सभा होती है ॥ सभाका ये काम है देशकाल, वय, शक्ति, देखके पापोंका विचार करके प्रायश्चितकी कल्पना करे इस नीतिको मानके स्मस्त धर्म निर्वाहकोनें

काम चलाया और शंकराचार्य्यसे लेकर चार संप्रदायमेंभि आजतक ऐसाही सदाचार मानकर चलाते आरहे है ॥

मनु–देशं कालं वय शक्ति पायं चावेक्ष्य यत्नतः ।
प्रायश्चित्तं प्रकल्प्यंस्यात्–यत्रस्यादस्यनिष्कृतिः ॥

अर्थ–जब अध्यात्मवेत्ता एकही जिस न्यायकी विधिको कहै उसको धर्मके व्यवहारमें मान लेनाही उचित धर्म्म है ऐसा मनुजी तथा बृहत् पाराशरजी कहते है शकराचार्यजी महत् धर्मके पालक थे तब शंकरनें देखाकी अब येह लोगकृत प्रायश्चित्ती है क्यों कि इन्होने मनमें अतिसंताप मान लिया है और ये भी कहा:—

आर्तानां मार्ग प्राणानां प्रायश्चिता नियेद्विजाः ।
जानन्तोऽपि न यच्छंतिते वैयांति समंतुतैः ॥
यंवदन्ति त्तमोभूताः मूर्खा धर्म मुत द्विदः ।
तस्यायं शतधाभूत्वा तद्वक्तृन ननु गच्छति ॥
प्रायश्चितं प्रयच्छंति येद्विजा नाम धारकाः ।
ते द्विजाः पापकर्माण समेता नरक ययुः ॥
अज्ञात्वा धर्म शास्त्राणि प्रायश्चितं ददाति येः ।
प्रायश्चित्ती भवेत्पूत किल्विषं पर्षदंव्रजेत् ॥ लोभा-
द्भयान्मोहान्मैत्र्यादपि कुर्युरनुग्रहम् । ते मूढा
नरकं यान्ति शतधा प्राप्त पातकाः ॥ प्रायश्चितेतु
चरिते पूर्ण कुम्भमयं नवम् । तेनैव साधंप्रास्येयुः
दत्वा पुण्ये जलाशये ॥ [illegible] घटं प्राप्य प्रविश्य
भुवनं स्वकम् ॥ सर्वाणि [illegible] कर्माणि यथापूर्वं

समाचरेत् । एतदेव विधिंकुर्यात् योषित्सू पतिता स्वपि ॥ वस्त्रान्नपानं देयंतु वसेयुः स्वग्रहान्तिके ।

अर्थ—(आगतानां) यहांसे लेके (स्वहान्तिके यहांतकका जो अर्थ है उसको लिखते है शंकरने क्या प्रमाणसे स्नान मात्रमे शुद्धि देके इनके हाथका जल पिया बाद इन्हींमेंसे ३६ आदमीयोंको क्यों जातिहीन किया इस प्रश्नका जबाब सब तरहसे संशय दूरके वास्ते लिखा है ॥ और ये प्रमाण जो है सो भगवान् मनुजी बृहत् पाराशरसे मिलायके लिखे है ये इतिहास मैनें रामरत्नदासजीसे कालीघाट कलकत्तेसे सम्वत् १८५० मे हनुमानखत्रिके प्रायश्चित्तके वखत पंचायतमें ब्राह्मणोंके कहे हुये मैने लिखे थे (उसकी शुद्धि करनेके समयमें) आज येह भारतीय जाति अभिमानीयोंके अहंकार दूर करनेके अर्थ लिखे जाते है भारतमें ऐसा कौन हिंदू है जो सनातनी बनके इन चार संप्रदायवाले आचारियोंको तथा शंकरजीको न माने मन लगाकर अर्थ पढिये जो सभामें आकर और कहीं भी अध्यात्मवित्के पास आकर आर्त जन प्रायश्चित देवो तब उन दुःखीयोंके प्रायश्चित्त जो उलट बताते हैय तब उस प्रायश्चित्तीका पाप उसको दुना होकर लगताहै ॥ पूंछनेवालेको जान बूझकर प्रायश्चित्त न बतावे वो भी तथा बिना विचारे बतावे वो भी नरकमें जाते है धर्माधर्मको नही जानकर जो प्रायश्चित्त बताते है येह जन सब मूर्ख तमोगुण प्रधान कहलाते है उस प्रायश्चित्तीके पाप सो गुणा होकर उनको लगता है और जो कोई वेदहीन ब्राह्मण प्रायश्चित बताते है और बडी माला धोती साफ तथा तिलक १२ लगाकर और अपनीहि देशभाषाकोही वेद मानते है ऐसे जो प्रायश्चित्तके बतानेवाले है वो सब नरकमें जाते है ये प्रमाण परा० अ० ८ श्लो० ८८ और परा० अ० ८।१४ यह कहता है धर्मशास्त्रको न जानकर जो प्रायश्चित्त बताते है उसको माननेवाले तो कृत प्रायश्चित्त हो जाते है बतानेवालेकी गति तो

नरकमें है वृ० पा० ६–८८ अर्थ लोभ लेके भयसे मित्रतासे जो बताता है वह नरकमें जाता है और उस पापको उसको सौ गुना भोगना पडता है ॥

तस्य गुरो बांधवानां राज्ञःस्वसमक्षं दोषाननभी रूययानु भाष्य पुनःपुनराचरंलभ तम स्वेति सयथै· बमपानवास्थितमतिःस्यात्ततोऽस्य पात्रं बिपर्यस्येत्

अर्थ—जब प्रायश्चित्ती सभामें आवै तब पंचायत उसके दोषको राजा उसके बंधु तथा गुरूके सामने जैसा बताया जाय वैसा न करै तो जातिसे छेक देना इसी मतलबको लेकर शंकराचार्य्यने उसमेंसे ३६ मनुष्योको शूद्र बना दिया ये प्रसिद्ध इतिहास है क्यों कि शंकराचार्य्य महान् योगीथे उनका जन्म वेदोद्धार करनेको भया है ये इतिहास सच्चा प्रतीत जो होता है सब बचन मनु पाराशर वृ० पारा मनु वाक्य है इनसे हमको सत्य दिखता है क्या बडी बात है शंकराचार्य्यजीनें मत जो स्थापित किये है वह भी शास्त्रानुसार हैं तथा रामानुजजीपरने जैसा वैष्णव मतोध्दार किया फिर क्या था चार संप्रदानुयायी अब अपने बडोकी चाल छोडकर कुत्ता चाल ग्रहणकर लिये हैं शंकरादिचार संप्रदायोंनें वेदोद्धार किया चाण्डालोको साथ में लेकर रामानुज स्वामीजीने संपत भगवानको दिल्लिसे लाये और प्रकालजीने डाकामार्गके विशेष तर धर्मको दिखाया और उसमे भी सिल्पियोंको मुक्त किया जो जो जाति इनकी साथमें डाका मारा करतीथी सब जातियां ब्राह्मणोंसे पूजाय मान भई है और भगवानकी आज्ञा है **अपिचेत्स दुराचारो** इत्यादि वाक्य गीतामें हैं सुदुराचारी जो मेरा भक्त है वह साधु मंतव्य है वो अच्छा कर रहा है ऐसे अनेक प्रमाण है ॥ शंकराचार्य्यने धर्मशास्त्रानुसार जल ग्रहण किया क्यों कि कृत्त प्रायश्चित्तके हाथका जल ग्रहण करनेका प्रमाण है उससे प्रायश्चित्तीको

निश्चय हो जाता है उसके दिलमें आनन्द हो जाता है ऐसा धर्मशास्त्र है इस लिये भगवत् शंकराचार्यजीनें जल ग्रहण किया भगवान शंकराचार्यजीनें लाखोही पुरुषोंकी प्रार्थना जब एक समयमें हुई और आर्त्तनाद भया तब देशकालानुसार धर्मका निभाव वेदोंका उद्धार किया प्रार्थनामें उन्होंने कहाथा हमारेको सभाकी जरूरत नहीं है क्यों कि आप अध्यात्म वित्त हो ऐसे न होते तो ये बौद्ध कैसा नाश होता अब आप उनके आसनको ग्रगहण तो करके मठाधीश तो बनते हो मगर काम नहीं करते उपकार क्या धूल करते हो शर्म नहीं बे शर्मी हैं जो जन सद्गुरूकी उपासना सेवा करते है उनको गूढार्थ तथा लौकि निर्वाहक न्यायरूपी बुद्धिका प्रादुर्भाव होता है ये बात भी गीताजीमें लिखी है ॥

मच्चिता मद्गत प्राणा इत्यादि.

अर्थ-जो कोई मेरी परामक्ति करता हैं मेरेही बोधका और मेरेही अर्थ लगा है उसको मै अच्छि बुद्रि देताहू जिम बुद्धियोगसे मेरेको प्राप्त होता है ऐसा श्रीकृष्णजीनें गीताजीमें कहा है अब इहां ये शंका आई बुद्धियोगसे क्या फायदा है मोक्ष देदेना था आपका संदेह तो ठीक है मोक्षविषयक ज्ञान जो ज्ञान है बिना उसके मुक्त नहीं होता है क्यों कि श्रुतिभी कहती है ॥

ऋतेज्ञानान्न मुक्तीः

अर्थ-विना ज्ञानके मुक्ति नहीं होती है अब आपके शंकाका जबाब यह है मोक्ष तो बुध्दियोगके साथमें है जब भगवत भक्तोंके ऊपर अति प्रसन्न होते है तब बुध्दियोग देते है उस बुध्दियोगसेही अध्यात्म ज्ञानवान् होकर धर्माधर्मको जानकार होता है और समस्त जनोपकारी होता है मोक्षका भागी बन जाना है यहतो संगका फल भया जब ऐसेही अरितीका संग होता है तब बुध्दि भ्रष्ट होती है और नाशभी हो जाता है ऐसे

संगका और असंगका फल श्रीकृष्णजीनें बताया है श्रीमान् शंकराचार्यजीनें तथा रामानुजादिचार संप्रदानिर्वाहकोने भगवत् भक्तिसे बुध्दियोगकी गति प्रदान हुइ तब अंधकार दूर करनेकी ऐसी रचना किया है जो भारतमें सूर्य्य चंद्रकी ज्योतिसी दिखती है जैसे दिया सलाई चकमकसे अंधकार दूर होता है इसी तरहसे इनके वचनोंका पालन करै तब अंधकार दूर होता है ऐसा ज्ञान उक्त सज्जनोंको प्रभुकृपासे प्राप्त भया था तभीसे आजतक इनकी कीर्ति बनी हुई है और ब्रह्माजीतक बनी रहेगी अब आपलोग इनकी पीठपर विराजकर क्या उच्चता दिखाते हो उसको तो हम क्या प्रगट करैंगे स्वयंहि प्रजाके सामने आ रहे है. अब आपकी पोल खुलती जा रही है अब आगेभी ध्यान दीजिये भक्तांग्र रेणु लिखते है प्रकालादि आल्वारोनें जैसी कृपा की है वोह सब विप्रोत्तम बने येह जाती सब शूद्राधर्मार्थ योगीवाहनजीका सहकुटुम्ब मुक्ति दी गई है ॥

तथोत्तमा विषेशेण यथा विप्राः खडंगगाःसत्संग प्रभावेण पूज्याः सर्वेहि मानवाः ।

अर्थ—इसका अर्थ जैसे छ अंगवेद पठनसे ब्राह्मण पवित्र है ऐसेही येह सब है जो जन सत्संगमें रहते है ॥

गोपोमालि तथा तेलि तंत्रि मोदक बारूजि कुलाल चर्मकारश्च नापितो नवसायक मालाकर मार्कर कंसस्कार कुविंदुक-कुम्भकार कंसकाव

अर्थ—गोप मालि तंत्र त्रितेलि (जो सारंगी तबला आदिकी और धनुष पिंजाकी सितारकी डोरी बनाता है) मोदक (नसकी चीजोंको बनानेवाला) वारूजि कुम्हार तथा चमार नाई तन सायक माली कर्मकार

शांतकार कुविन्दुक घडे बनानेवाला कासेका बनानेवाला और बहुतसे अपवित्र जातियां आल्वारोंने पवित्रकी ऐसी गाथा गाई है और येह प्रसिध्द बात है इन आल्वारोंकी पुजा करते है येह सब शूद्र थे वहांपर ये बात प्रसिध्द है सो नहीं वल्कि सव जानते है एक समय कांची नगरमें शैवब्राह्मणने आकर कोलाहल मचाया और कहा कि आपलोग ब्राह्मण है विष्णु पूजाके साथ शूद्र आल्वारोंकी प्रतिमा बनाकर क्यों पूजा करते हो तब सभा भई उसपर वेदान्ताचारीजीने उसके प्रश्नमें निवेश किया कि आप जानते है लोभ हर्षण की क्या जातिथी उसने कहा सूतजातिथी तब वेदान्ताचारीजी बोले उसको जब ऊंचे आसनपर बैठे देखकर बलदेवजीने मार डाला तब ब्राह्मणोंने, कहां हमने इसे ऊंच आसन बैठायाथा विष्णु धर्मजाननेके निमित्त अब आपको इसके मारनेसे ब्रह्महत्या लगी है आप इसके निवारणार्थ तीर्थयात्रा करिये तथा विदुरजीकी दाह क्रिया युधिष्ठिरजीनें ब्रह्ममेध विधिसे कियाथा और जो लोमहर्षणके पुत्रको सूतजीको शौनकोने क्यों आदर दिया, श्रावणने दशरथजीको कहा राजन् येह ब्रह्महत्या आपको अनजान से मारागया है इससे नही लगी है जानकर मारनेवालेको ब्रह्मवादीकी हत्या इन्द्रपदसे गिरा देती है इसका जन्म शूद्रामें था अब आप कहिए येह शूद्र आपके मतानुसार ब्रह्मवादिकसे हो सक्ता है आप तो जातिमें हैं ऐसी बहुत बात सुनके ब्राह्मणोंको कर्म प्रधान मानना पडा है अब आप स्पृश्यास्पृश्यकी प्राचीन प्रणालीकाकी रीतिको पढकर खूब सोचिये हमारी कहांतक भूल है येह अंध प्रणालिकाका नाश करनेको उतारू बनकर देशोन्नतिकी वृध्दिकी जिये राजा रामचन्द्रजीकी रीतिको समस्त मानते है उनको मर्यादा पुरूषोत्तम कहते है आपकी स्तुति तथा गुण तो वाल्मीकजीने लिखा है हमकोतो यहांपर केवल स्पृश्यास्पृश्यकी जरूरतहै रामचंद्रजीने अस्पृश्य सुग्रीव कास्पृश्य क्यों कियाथा व्याधका तथा शिबरीका पूजन क्यों लिया इसको विचारीये वालीने कहाहै हे राजन् हमारे मांस तथा अस्थिको मनीषी अस्पृश्य

बताते हैं इस लिए हमारे चर्मास्थिको स्पर्श नहीं करतें हैं रामचंद्रजीने इस धर्मशास्त्र वाक्यका अनादर क्यों कीया और राजा युधिष्ठीरकी सभामे म्लेच्छ, यवन, बेठतेथे अर्जुनसे यवनादि शस्त्रविद्या शीखतेथे येह स्पृश्यास्पृश्यकी चाल प्राचीन दीखती है प्रमाण हम पहेले लीख दीये हैं ॥

यय्यदा चरति तथोत्मा ॥

येह दो श्लोक पढलेना अब हमारेही धरके चीरागसे रोशनीको अंधेरा वांह येह है गोहत्यारेको अपने साथ बैठाते हैं इज्जत देते है अपने देसके जो शुद्र नीच चमारादि कहलाते हैं उनको इज्जत नही देते हो जब चमारादि मुसलमान या इसाइ बन जाते हैं तब तो आप उन्को इज्जत देते हो येह सब अंधप्रणाली है ॥

नीचोंका उद्धार करने में अन्य प्रमाण.

एक समयमें जयदेव कवि ललितापूर आकर राजसभामें जैसा फैसला दिया वो यह है एक चंद्रमणि ब्राह्मणका पुत्र शंभु शर्म्माथा उसने मलाहकी पुत्रीको रख लिया और तीस ३० वर्ष उसके साथमें रहा तबतक चंद्रमणि तो वृद्धतासे दुःखी भया और रोज २ राजाके पासमें जाकर दीनःभावनासे अन्नादि ग्रहण करताथा दैववश राजाने कहाकि अबतो भूदेवजी वृध्दतासे दुःख पाते हो अपने पुत्रको भेजा करो ऐसा राजाका वचन श्रवण करके रो दिया तब ब्राह्मणका दुःख सुनके दूतोंको भेजकर कलिङ्ग देशसे शुद्राके साथ सहित संतानके बुलाया तब राजाने सभाकी और जयदेव कविको तथा और दश ब्राह्मणोंको बुलाया (पंचायत किया) तब उन सभोंके सामने जयदेवने राजामान्धाताका प्रश्न इन्द्रप्रति तथा इन्द्रदेवका प्रत्युत्तर राजा ललितपुरकी सभामें पठन किया और सभानें मानलिया विप्रको सहित संतानके जातिमें मिला लिया ॥

प्रमाण सभाके:—

राजा मान्धाताकी शंका.

यवनाः किराताः गान्धाराश्चीना शवर वर्वराः ।
शकास्तु षाराः कंकाश्च पल्हवाश्चांद्र भद्रका ॥
पौंड्राः पुलिन्दाः रमठाः काम्बोजाश्चैव सर्वसः ।
ब्रह्म क्षत्र प्रसूताश्च वैश्यः शूद्राश्च मानवाः ॥
कथं धर्मांश्चरिष्यन्ति सर्वे विषय वासिनः ।
एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं भगवंतत्ब्रवीहिमे ॥
त्वं बन्धु भूतो ह्यस्माकं क्षत्रियाणां सुरेश्वर ।

अर्थ-मान्धाता राजानें मनुजीके वचनोंसे संदेह होकर इन्द्रदेवसे पुछा कि हे देवराज यवन--किरात--गान्धार--चीन--शवर--वरवर--शक--तुषार कंक--पल्हव--आंध्र- पौण्ड्र--पुलिन्द- रमठ--काम्बोज येह सब जाति ब्राह्मणादि से पैदा भई हैं येह सब दस्यु मनुजीने मानी है हमारे विषय वासी है मैं इनका स्थापन कैसा करूं सब दस्यु जीवित है इस प्रश्नको सुनके इन्द्र देवने जबाव दिया ॥

मता पित्रोर्हिंशुश्रुषा कर्तव्या सर्व दस्युभिः ॥
आचार्य गुरु शुश्रुषा तथैवाश्रम वासिनाम् ॥
भूमिपानांच शुश्रुषा कर्तव्या सर्व दस्युभिः ॥ वेद धर्म क्रियाश्चैव तेषां धर्मो विधीयते । पितृयज्ञाः तथा कुपाः ॥ प्रपाश्चाशयनानी च दानिच यथा कालं द्विजेभ्यो विसृजेत्सदा अहिंसा सत्यमक्राधो

वृत्ति दायानु पालनम ॥ भरणं पुत्र दाराणां शोचम द्रोह एवच ॥

अर्थ–माता पिताकी सेवा आचार्य गुरूकी सेवा और ब्राह्मणोंकी सेवा राजाओंकी सेवा वेद धर्म प्रक्रिया (जो वेदका धर्म कहा हुआ है उसकी रीतिसे चलना) जयदेवने कहाकी राज धर्मके अध्यायमे येह प्रमाण कही है इससे साफ़ माल्हम भया जब वेदका अधिकार है और गुरु सेवाका अधिकार है. आचार्य सेवाका अधिकार है बिना जनेऊके पहिने आचारी नहीं बनता बिना ज्ञान लिये गुरु कहांसे होगा जयदेवकी वार्ता को शीघ्र समझ गये फिर सभाके ब्राह्मणोंने कहा कि जयदेवने धर्म व्यवस्था सत्य कही हम समझे जब इन्द्रदेवने ऐसी आज्ञा दस्युओंके लिये दी है। यह तो ब्राह्मण है. इनका प्रायश्चित्त किया जाय तब उस से पूंछा गया आप केसी रीति से रहते है उसने कहा आप लोग देख रहे है. तब सबोंने मिलके कहा येतो हमको धर्म्माचारी दिखता है और दूतोंने भी कहाथा हमने जब इसको देखा था तब हवनसे पूर्णाहुति करके उठा था अब क्या किया जाय तब उसकी संतानको राजाने क्षत्री धर्म दिया और उसका विवाह जातिमे करके सामिल किया शूद्रा जोथी उसको ग्रास भागी बनाया (अर्थात् सामिल रोटी कपडा दिया जीवनकी आज्ञा दीइ गई मलाहकी जाति अन्त्य जो में है उसको ब्राह्मणके साथमे पवित्र मानी गई है क्यों कि पतिके गुणसे भार्य्याकी पुज्यता होति है विप्र अपने कर्म में तत्परथा आपस मे शीघ्र मेल हो गया यहांपर कुछ इन्द्र वाक्य छूट गई है अब आगे दिखा देंगे जब प्रमाण प्रकरण लिखेंगे अत आप इस बातका खूब विचार करिये मान्धाताका प्रश्न यह था ॥

ब्रह्मक्षत्र प्रसूताश्च वैश्या शूद्राश्च मानवाः ।

इसका अर्थः–ब्राह्मण दि विषय की वासनामें अतिशय प्रवेशके हेतु होकर किस तरहसे धर्मकर्के वेद मर्यादाका पालन कर सकते है क्यों कि

दस्यु संज्ञा है धर्म तो वेद विहित है और सब इतर पाखण्ड है । श्रुतिस्मृति पुराणा दिसे उध्दृत जो है सो मानव धर्म है इसका साफसाफ जवाब राजा देवराजने दिया है उन्होने इन सर्वोको आचार्य्ये सेवा गुरु सेवा वेद धर्म और मानव धर्म बताने के विषय मे आचार्य और गुरूका नाम लिया है अब आचार्य तथा गुरू किसको कहते है येह देखिये प्रमाण जनेऊ देकर वेद पढावैं ऊसका नाम आचार्य है ॥

प्रमाणः—

उपनयेतुयः शिष्यं वेद मध्यापयेत्बुधुः । सांगंचस-रहस्यंच तमाचार्यः प्रचक्षते ॥

अर्थः—अज्ञानका नाश करके जो ज्ञान बताता है उसका नाम गुरु है,

और दस्यु मंत्राधिकारी भी हैः—

सब विचारो जब आचार्य की सेवा कही तब मंत्राधिकार आ गया जो यह भि नही जानते है हम पहले कौन थे ब्राह्मण थे कि क्षत्री थे कि वैश्य थे इन सब कोही उपवित्ताधिकार है और रघुवरने मनुष्यका जन्म तो धर्माचरण करनेके अर्थ कहा है आप येह कह सकते हैं जो गोहत्यारे ब्रह्महत्यारे हैं उन सबका वेदाध्ययन में अधिकार नही हैं हां कह सक्ते है गोहत्यारा ब्रह्महत्यारा वेद नही पढ सक्ता है क्यों कि वह मलीन है फिर रावणा दि जो लंकामें महान् ब्रह्मराक्षस थे वो सब वेद पढते थे और देवता मंत्र भि उनके सिद्धथे अगस्त्य मुनिने अपनी सहीता में मनुष्य मात्र को राम मंत्रमें अधिकार दिया है ॥

स्त्रियः पतिव्रताश्चान्ये प्रतिलोमानुलोमजा । लोकाश्चाण्डालपर्यन्तं सर्वेप्यत्राधिकारिणः ॥

अर्थ—स्त्री प्रतिव्रता और लोम अनुलोम (लोम उसे कहते है ब्राह्मणसे ब्राह्मणीमें) अनुलोम उसको बोलते है जैसे ब्राह्मणादिमें शूद्रसे और क्षत्रियमे वैश्य से ब्राह्मणी में क्षत्रियसे ब्राह्मणीमे वैश्यसे जो संतान होती है उसको विलोम कहते हैं) और लोकमे चाण्डाल पर्यन्त सबका राममंत्रसे अधिकार है । इसी तरह ब्रह्मोत्तर खण्डमे भी शिव पंचाक्षर का अधिकार है ॥

श्रुतिर्ब्रह्माहषड्वर्णं स्मृति वर्णं द्वयात्मकम् ।
षड्वर्णं ब्राह्मणादिनां अन्येषांच्चद्विवर्णकम् ॥
तदन्येषां देशीकेन वक्तव्यं तारकं परम् ।
महापातक दावाग्निः सोऽयं मंत्र षडाक्षरः ॥
प्रणवेन विना मंत्रः सोऽयं पञ्चाक्षरोमतः ।
स्त्रीभिःशूद्रैश्च संकिर्णै र्धायन्ते मुक्तिकांक्षिभिः॥
नास्यदीक्षा न होमश्च न संस्कारो न तर्पणम् ।
नकाल नियमाश्चात्र जाप्यं सर्वैयं मनुः ॥
वैश्यै शूद्रैर्भक्तियुक्तै म्लेच्छैरन्यैश्च मानवैः ।

अर्थ—मंत्रमे मनुष्य मात्रका अधिकार है इस से और मानधाताके प्रश्नका जो इन्द्रदेवने जबाब दिया है इन दोनोंको मिलाने से साफ तौरसे येह माळुम भया है मनुष्य मात्र का सत्कर्म करने में अधिकार है और स्कंद पुराण मे तो विष्णुभक्त शिवभक्त कों ब्राह्मणोंसे भी अधिक माना गया है और गीताजी मे तो भगवत् श्रीकृष्णजीने कहा है ।

मांहि पार्थ व्यथाश्रित्ययेऽयिस्युः पापयोनयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपिपांति परांगतिम् ॥

अर्थ-अब तो पूरा जवाब मिला क्यों सभामें ब्रह्मवेत्ता एकही जवाब देता है अब शुध्दि सभामें श्रीकृष्णजीका यही एक वाक्य प्रमाण में मानोगे तो ठीक है इससे ज्यादा मनकी शंका दूर करनेकी आप सत्पुरुषोंकी इच्छा है तो श्रीमद्भगवद्गीताके नवम अध्यायको सत्यासत्य संदेह दूर करके पढो मनकी शुध्दि हो जायगीं और युग धर्मके हिसाबसे तथा पराशर वाक्यसे भी यही है ॥

कलिर्धन्यः कलिर्धन्यः-

ऐसा तीन बार कह दिया है और श्रीकृष्णजीनें भगवद्गीताके तीसरे अ० ३ श्लो० २१ का प्रमाण जो है उसको पहले लिख आये है ॥

यद्यदाचरति ॥

अर्थ-श्रेष्ठ पुरुष जैसा आचरण करता है और २ लोगभी उसीका अनुकरण करते है श्रेष्ठ व्यक्ति जिसे अच्छा उत्तम कहती है और लोगभी उस कथनको श्रेष्ठ मानकर उसके पीछे २ चलते है अब आप देखिये चार संप्रदायके आचार्योंनें जैसा हिन्दुओंको मिलाया है उसीका अनुकरण करिये इसमें आपको दृढतर प्रमाण मिलते है इससे ज्यादा क्या प्रमाण देगा अब भी अपनी चालको छोडके आपलोग कर्म प्रधानताही सत्यमानो ऐसा माननेसे गोहत्याकाण्डका नास होगा भारतोध्दार होगा सतोगुण दयाकी वृध्दि होगी इनका विचार करके जन्मसे जाति है इस अंध अधम बुध्दिका नास करके आप अपनी जातिकी वृध्दिमें लग जाइये--ईसाई तथा मुसलमाम मत बनाइये जो जो भाई चले गये है उनकी शुध्दि करके मिलावेंगे तब ठीक काम चलैगा और जो हानि हो रही है उसका नाश होगा ।

भोजन में पहलेसे मेल था कि नही.

ऐसा जानना चाहते है तो वाल्मीकीरामायणमें दशरथ राजाकी यज्ञके भोजमें. सबने एकही अन्न एकही पंगतमें खाया है अन्नतो श्रध्दाहीन

शूद्रका न खावै और दुराचरणी ब्राह्मणका न खावै इसमें मनु और पाराशर प्रमाण है। श्लो० मनु० अ० ४--२२३ ये कहा है शूद्रका अन्न पंच महायज्ञहीन है उसके घरका अन्न बना हुआ न खाय अगर काम पडजाय तो कच्चा अन्न लेना येही हेतुसे अर्थात् पंचमहायज्ञ न करनेवाला जो ब्राह्मण है वह दुराचारी है उसके हाथका अन्न न खाय शूद्रतो रसोई बनाते है ऐसा प्रमाण है और आपका कहना तो गलतही माळूम होता है गलत नहीं हैं मैंने ये समझाथा कि आपलोग सब तिलकधारी है और सत संगभी आपको अच्छाही होगा इस लिये थोडेमें आप समझ जायंगे अब तो आप येहि कहिये की ऋषियोंकी आज्ञा पालन करना तो जरूरी बात है हांजीं आपका कहना ठीक है जो शूद्रने अपने घरमें देव ऋषिके नमित अन्नादि बनाया है उसको खाना चाहिंये विना इसके ब्राह्मणके हाथका भी न खाना चाहिए आपको ज्यादा इसमे क्या हठ है आप उसको तो कह दीजीए तब उत्तर बनैगा मेरा कहना तो येह मनुष्यजाति एक है फिर मुनिजनोंने अन्नादिक खानेपीनेका निषेध क्यों किया रसोई बनवानेकी तो आज्ञा दी है॥

प्रमाण देखिये आपस्तंभ २-२-३

आर्य्याधिष्टिता वा शूद्राः संस्कर्तारः स्युः।

अर्थ-आर्योकी अध्यक्षतामें खुद रसोई बनावै महाराज रामचंद्रजी तथा युधिष्ठिरादि राजाओंकी राजसुयादि यज्ञमें चारो वर्ण एकत्र होते थे सभी एक जगह खाते थे फिर येभी कहा है अपने २ धर्मस्थ हो तो खाना योग्य है नही तो न खाना महर्षि आपस्तंभ अपने धर्म सूत्रमें भोज्या भोज्यका वर्णन करते हुये प्रश्नोत्तरसे लिखते है॥

प्रकस्यान्नः १-६-१९

अर्थ--किसका अन्न खाना चाहिये॥

उ०- ईप्सेदिति कण्वः ३-१-६-१९

अर्थ--कण्वऋषि उत्तर देते है कि जो खिलाना चाहै उसीका खा लेना चाहिये इसमें येह संदेह है तब तो चाण्डालादि सबका खा लेना चाहिये इस लिये कौत्स ऋषि कहते है कि—

पुण्यहाति कौत्सः ४-१-६-१९

अर्थ--जो पवित्र शुध्दाचारी हो उसका अन्न खाना चाहिये और—

यः कश्चिद्द्यादिति वार्ष्याणि ५--१-६-१९

अर्थ—वार्ष्याणि कहते है जो कोई देदेवै चारो वर्णमेसे उसका खा लेना चाहिये ऐसा कहा है इसमें आपस्तंभ ऋषि अपना मत कहते है॥

सर्व वर्णानां स्वधर्मे वर्तमानानां भोक्तव्यम् । १३

अर्थ—अपने २ धर्ममें वर्तमान जो है ऐसे चारो वर्णोके हाथका खाना चाहिये ऐसा लिखके आगे लिखते है॥

शूद्र वर्ज्जमित्येके ।

अर्थ—कोइ २ येह कहते है शूद्रका अन्न नहीं खाना चाहिये परंतु इसमें अपना सिध्दान्त प्रगट करते हुये आगे सूत्रमें ९४ में लिखा है॥

तस्यापि धर्मोनतस्य ।

अर्थ—अपने धर्ममें लगे हुये शूद्रकाभी खा लेना चाहिये अब असली वात येह है खान पानका जो विचार है मनकी पवित्रताके ऊपर शुध्दिके हेतु है भारतवासीयोंकी आर्यावस्था येह थी जिसको आर्य्योंने अपने जीवनका मुख्योद्देश्य माना है और जिसकी पूर्तिके लियेही संपूर्ण नियमोप नियमोंका अनुष्ठान है उसका नाम आत्मज्ञान ब्रह्मप्राप्ति है वेद कहता है कि वहः—

ब्रह्म शुद्ध मपापविद्धम् ॥ यजु० अ० ४० ।

अर्थ—वह ब्रह्म शुद्ध पवित्र निष्पाप है अतःउसकी प्राप्तिके लिये केवल शुद्धिकी आवश्यकता है । महाराजजी ब्रह्मप्राप्तीमें अहार शुध्दिकी क्या आवश्यकता है ब्रह्म प्राप्तिके लिये तो त्रिदंडादि कहा है यह नहीं. आहार शुध्दिसे उपनियमकी जरूरत जबरदस्त नहीं हैं । त्रिदंडादि तो उपनियम है विशेष तो आहार शुध्दि है ॥

यद्यपि वृद्ध गौतम उपनियममें यह प्रमाण देते हैं:—

त्रिदंड धारणं मौनं जटा धारण मुंडनम् । वल्कलाः जिनसर्वांशो व्रतचर्याभिपचनम् ॥ अग्निहोत्र वनेवासः स्वाध्यायो ध्यानसंस्क्रिया । सर्वाण्येतानि वैमिथ्या यदिभावो न निर्मलः ॥

अर्थ--त्रिदंड धारण करना, मौन साधन अथवा मुंडनादि सब वृथा है, अर्थात् केवल इनसे आत्मिक ज्ञान नहीं होता जबतक भाव शुध्द न हो और चित्तकी शुध्दि बिना आहार शुद्धि असमर्थ है जिसका अन्न अपवित्र है उसका भाव निर्मल नहीं होसकता ॥

आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः सत्व शुद्धौ ध्रुवा समृतिः ॥

अर्थ-आहारकी शुध्दिसे चित्तकी शुध्दि होती है चित्तके शुध्दिसे सत्य ज्ञानकी प्राप्ती होती है अतःऋषियोंने शास्त्रानुसार शौचको धर्मका एक अंग माना है इस लिये शौचाचारका उपदेश दिया है ॥

शौचाचार विहनस्य समस्ताः निष्फला क्रियाः ॥

अर्थ—शौचाचार विहीनकी क्रिया निष्फल है वह शौच क्या है इसका उत्तर देते हुये अत्रिऋषि लिखते है कि—

अभक्षपरिहारश्च संसर्गश्चाप्य निंदितै : आचारेषु व्यवस्थानं शौच मित्यभिधीयते । ३५ । अत्रि

अर्थ-अभक्ष्यका त्याग, निन्दितका त्याग और अपने वर्णके अर्थ जो बिहित है उसकेही अनुकरणका नाम आचार है और यह शौच धर्म चातुर्वर्णियोंका साधारण धर्म हैं, मनुने चातुर्वर्णियोंके अर्थ अध्ययना ध्ययन आदि भिन्न २ धर्मोंको बतलायाहै वहां साधारण धर्मका वर्णन करते हुवे लिखा है कि:-

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौच मिन्द्रिय निग्रहः । एतं सामासिकं धर्म चातुर्वर्ण्ये ब्रवीन्मनुः ॥ अ० १०-६३

अर्थ-जीवोंको दुःख न देना उनका गला नहीं काटना उसमें भी शौच रखना इन्द्रियोंका दमन करना ये चातुर्वर्ण्य धर्म सबके लिये हैं यदि मनु आदि ऋषियोंका यह कहना है कि शूद्रका भी शौच धर्म है जैसा द्विजोंका और यह वातका अब विचार है मनुजी तो जो अभक्ष्य भक्षणसे रहित होकर अपने आचारमें रत रहे वह शुद्र भी पवित्र है इससे जानागया ॥

(शुचंद्रवतीति शूद्रः)

अर्थ-पूर्वोक्त शोचके त्यागने वालेका नाम शूद्र है चाहे वह कोई भी वर्णका क्यों न हो और आपस्तंभका यक वाक्य है ॥

स्वधर्मे वर्तमानानां भोक्तव्यम् ॥

अर्थः—अपने धर्ममें स्थित चारो वर्णोंका अन्न खाना योग्य है पतित भ्रष्टाचारीका अन्न न खाना चाहिये ऐसा आपस्तंभका वाक्य है तात्पर्य यह हुवा है कि अथर्व वेद आज्ञानुसार तुम्हारा भोजनादि एकही हो ॥ अथर्व ३ सू० ३० ॥

समानि प्रपा सहवोन्न भागः समानेयोक्त्रे सहवो युनज्मि ॥ अथर्व कां० ३ सू० ३०

अर्थ—हे एकता चाहने वाले मनुष्यो तुम्हारा पानीपीनेका स्थान एक हो तुम्हारा भोजनादि एक हो इसपरभी भाष्यकार सायनाचार्य्य लिखते हैं ॥

अन्नभागाश्च सहएव भवतु परस्परानुरागवशेन एकत्रा वस्थितमन्न पानादिकं युष्माभिरूप भुज्यता मित्यर्थः ॥

अर्थः-तुम्हारा अन्न भाग साथ हो अपनी परस्पर प्रिती के कारण एक स्थान खावो इसी अथर्व वेद वाक्यके मानसे ब्राह्मणादि चारो वर्ण एकही स्थानमें भोजन करते थे (अर्थात् एक पंगतमें खाते थे) और जबतक अग्निहोत्र कर्म प्रधान में भारत जनोंकी श्रेणि रत रहती थी तबतक षडङ्ग वेद पाठ स्वाध्याय दि पठनमे नित्य नैमित्तिक सूत्रानुसार कर्म याद रहते थे । अब सांप्रतमें जो प्रणाली ब्राह्मणादिकोंमें प्रचलित है सो विश्व विदीत है ॥

(कवित्त वाक्य)

होत सबेर उठे घरसे अस्नानओं ध्यानको काम कहाहै । संध्यादिक कर्मैं व्यर्थ सभैं मन शुद्ध भये सब कर्म रहा है ॥ हाथतमाखु वह गांजा लिये तब माफी भीजाय चिलम गहा है । आवहु देव सभैं मिलके यह यज्ञके धूम्र प्रवाह महा है ॥ करनैं धूम्रके पान मभैं सब देव पूकार पूकार कहा है । स्वर्ग कहां ब्रह्मलोक कहां वैकुण्ठ कहां

सब ब्यर्थ रहाहै ॥ स्वर्गादिक लोक वहीं सब हैं जहां हाथ आइ चिलम गहा है । ए हरि दास पुकार कहैं कलिमें यह ब्राह्मण वेद गहाहै ॥

अलग वेद वाक्य

कांधे जनेउ एसा तैसा । बिन हुक्केका ब्राह्मण कैसा ॥ संध्या घोडी तर्पण गाडा । वेद पढेसो कच्चा भांडा ॥ चार वेदमें उसको जाणु । जो उंट लादनमें बडो सियानो ॥

अर्थः--देखिये समयका प्रभाव कैसा बलवान् है कि त्रिवर्णोंसे तथा आपसमेभी उत्तरोत्तर तपोबल प्रभावसे तथा वेदाध्ययनसे ब्राह्मण जाति कैसी उंच्चताकी प्राप्तथी, साम्प्रतमें रन [illegible] गायत्री तकभी याद नहीं है जिसके प्रभावसे ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व और वैश्यत्व प्राप्त होता था अब तो आडंबर सर्वत्र मान्य है और देखिये शास्त्रकारोंने जिन्हें चांडाल माना गया है उनको समस्त लोक व्यवहारमें शामिल किया है उनके हाथका जल, रोटी आदिका वेल देना और बनाया हुवा परिपक्व अन्न भी खाते हैं यह कौनसे वाक्य प्रमाणसे नाई कुम्भार मल्लाह आदिका स्पृश्यताम ग्रहण किया है जो अन्त्यज हैं और कभी इस बातका विचार हुवा होगा उनकी कन्यावोंसे लग्नभी करते थे पूर्वकालमें एसा व्यवहारथा व्यङ्गकालमें ये जातियां ब्राह्मणोंकी आज्ञासे पंचायतादिसे समाजके अनुसार तथा जातिगंगाके अनुसार प्रायश्चित्त देकर ग्रहण करते थे यही अत्रिऋषि अपना संहितामें लिखते हैं किः—

अंगीकारेण ज्ञातिनां ब्राह्मणानुग्रहेणच पुयंते तत्र पापिष्ठाःमहापातकीनोऽपिये (अत्रि २७४)

अर्थ-यदि जाति स्वीकार करें और ब्राह्मणोंका अनुग्रह हो तब तो नीचसेभी नीच पवित्र हो जाते है तब तो भोजनका झगडा झुठा है ॥

यह पण्डित बनवारिराम शर्म्माकी प्रायश्चित्त सभा ॥

विक्रम संवत् १९५१ में विधर्म गतिको प्राप्त हुये २१ ब्राह्मण उक्त पण्डितजीके पास आकर सविनय प्रार्थनाकरी कि हम सब ब्राह्मणविधर्मी होगये है हमारेको शास्त्राज्ञानुसार प्रायश्चित्त देकर शुद्ध करो तब पण्डितजीने समस्त वृतांत पुछकर शास्त्रानुसार परिषद (सभा) करके प्रायश्चित्त देकर जाति शामिल किये ॥

सारभूत सभाके वाक्य.

प्रमाणमार्गं मार्गन्तो येधर्मं प्रवेदन्तिवै । तेषां मुद्विजते पापं सद्भुत गुणवादिनाम् ॥ यथाऽश्मनि स्थितंतोयं, मारुतार्केण शुद्धयति । एवं परिषदाऽदेशान्नाशयेत्तस्यदुष्कृतम् ॥

अर्थ--जो ब्राह्मण, प्रमाणोंको ढूंढकर धर्मकी व्यवस्था देते हैं । उन गुणमय धर्मका वर्णन करनेवाले सज्जन पुरुषोंसे पाप उद्विग्न (भयभीत होकर) दूर रहता है । सो जैसे पत्थरपर गिराहुवा जल, वायु और सूर्यसे सूख जाता है । इसी प्रकार विद्वान् ब्राह्मणोंकी परिषद (सभा) द्वाराबतायेगये प्रायश्चितसे पापीका पाप नष्ट हो जाता है । बस, इन धर्म शास्त्राज्ञाओंपर ध्यान देकर, धर्मशास्त्र समयानुसार, देश काल सामर्थ्यको देखकरही महापातक, उपपातक, एवं—"जाति--भ्रंशकर"--"संकरी करण" "अपात्री करण" और "मलिनी करण" आदिपातकोंके करनेपर पातकीको, शास्त्रोंमें दिखाये हुये तत्तत्संबंधी प्रायश्चित देनेकी व्यवस्था करनी चाहीये ॥

ब्राह्मणोजायमानोहि पृथिव्यामधिजायते । ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोषस्यगुप्तये ॥ [मनु० १–९९]

अर्थ--अर्थात् पृथ्वीपर धर्मकोश (खजाने) की रक्षा करनेके लिये आपजन्यसेही बडे हैं और सभी प्राणीयोंके ईश्वर है ॥

सएवनियमो ग्राह्यो यद् एकोपिबदेद् द्विजः । कुर्याद् वाक्यं द्विजानांतु अन्यथा भ्रुणहाभवेत ॥
[पराशर अ० ६–६०]

अर्थ--वह एकभी ब्राह्मण जिस प्रायश्चितके करनेको कहे, तो उस ब्राह्मणके कथनानुसार उसका पालन करना चाहिये ! अन्यथा ब्राह्मणोंके वचनोका निरादर करनेसे गर्भहत्याका पाप लगता है ॥

गृहीतोयोबलान्म्लेछैःपञ्चषटसप्तवासमाः दशादि विंशतिं यावत्तस्य शुद्धिर्विधीयते ॥ ५३ ॥
"प्राजापत्य द्वयंतस्य शुद्धिरेषा विधीयते ॥

अर्थ--बलात्--जबरन् म्लेच्छोद्वारा पकड लियेगये आर्य्योंकी पांच वर्षोंसे छे--सात--दस--बीस वर्ष पर्यन्त म्लेच्छोंमें रहे हुये होनेपर उन्हे दो--प्राजापत्य अथवा दो चांद्रायण कृच्छ व्रत दे ॥

धर्मस्य ब्राह्मणो मूलमग्रं राजन्य उच्चते । तस्मात् समागमे तेषामेनो विख्याप्य शुध्याति ॥ ८३ ॥
तेषांवेद विदांब्रूयुस्त्रायोप्येनः सुनिष्कृतिम् । सातेषांपावनाय स्यातपवित्रा विदुषांहिवाक् ८४
(मनुः अ० ११)

अर्थ--ब्राह्मण धर्मका मूल है. और राजा (क्षत्रिय) अग्र है इस लिये उनके समागम (सभा) में अपने पापका निवेदन कर प्रायश्चिती शुद्ध हो जाता है । क्योंकि तीन वेदवेत्ता विद्वान् जिस पापके लिये जो प्रायश्चित (दण्ड) नियत करें उसीसे पापीकी शुध्दि हो जाती है क्योंकि विद्वानोंकी वाणीही—पवित्र होती है ॥

तेहिपापकृतांवैद्याः हन्तारश्चैव पाप्मनाम् ।
व्याधितस्य यथावैद्याः बुद्धिमन्तोरूजापहा ॥
(पराशर २९७)

अर्थ--वे (पूर्योक्त) विद्वान् लोग पातकियोंके पाप दूर करनेके लिये उनके वैद्य हैं जैसे रोगीके रोग दूर करनेवाले भिषग् ॥ (वैद्य) तत्पश्चात परिषदने सहमत होकर प्रायश्चितके लिये निचे लिखे श्लोकोंका प्रमाण दिया ॥

गायत्री परमादेवी भुक्ति मुक्ति प्रदाचतां ।
योजपेत्तस्यपापानिविनश्यन्तिमहांत्यपि ॥
[गरुड पु० ३७ । १]

अर्थ--गायत्री देवी भुक्ति और मुक्तिके देनेवाली है । जो इसका जपकरता है उसके बडेसे बडे पाप नष्ट हो जाते हैं ॥

गायत्र्या शतसहस्रं सर्वपाप हरंस्मृतम् ।
[बृ पा० ६-२९१]

अर्थ--एक लक्ष गायत्री जपसे सर्व पाप नष्ट हो जाता है ॥

गायत्री रहितो विप्रः शूद्रादण्य शूचिर्भवेत् ।
गायत्री ब्रह्मतत्वज्ञाः सम्पूज्यन्ते जनैर्द्विजा ॥
पाराशर अ. ८—२१)

अर्थ--गायत्री मंत्रका जप, न करणेवाला ब्राह्मण शूद्रसेभी अधिक अपवित्र माना जाता हैं और गायत्रीको जाननेवाले ब्राह्मणोकी पूजा मनुष्य करते हैं ॥

इसी सिध्दान्तानुसार परिषद (सभा) ने देशकालानुसार गायत्री जपसे प्रायश्चित देनेकी आचार्य्यको आज्ञा देदी तब आचार्य्यने सुदिनमें गणपत्यादिपूजन पूर्वक उन २१ ब्राह्मणोकों पूनरांपवित देकर पञ्चगव्य पानके बाद गोदान करवाके स्थाणेश्वर महादवके शिवालयमें सवा सवा लक्ष गायत्रीं जप करने बाद ब्राह्मणोंके चर्णोदकसे स्नानादि और द्रव्यवानोंको यथाशक्ति गायत्री प्रतिमा दान ब्राह्मण भोजन करवाके पश्चात् उनको जातीमें भोंजन देकर परिषदने मानपत्र दे दिया यह इतिहास विशेष तयाचर्णदासकृत विवेक चन्द्रिकामें लीखा है और चर्णदासजी इसमें अपना यह सिध्धान्त प्रगट करते है कि देखिये गायत्री मंत्रपूर्वक प्राणायाम, ईश्वरध्यान, रामनाम, तीर्थस्नान, पश्चात्ताप, ब्राह्मणोंके चर्णामृत शास्त्रानुकुल व्यवहारसे शुध्दि दी है ॥

कृत् प्रायश्चित्त २१ ब्राह्मणोंमेंसे चतुर्भूज विप्रने इनकी गाथाभी बनाई हैं जीसका कुछ निर्देश देताहुं ॥

धन्यस्त्वं जगति तलेही बहुधा कीर्त्या श्रिया शोभिताः येनत्यक्तजनाःसर्वे तारिता यवनांभतः पाविताऋषि भिर्वाक्यै ब्राह्मणा २१ एक विंशति

अर्थः—उपर के श्लोकका भाग पूरा नहीं मिला प्राचीन होनेसे अक्षर गत होगये चतुर्भुज कहता है कि हम सबको यवन रूपी समुद्र जलमेंसे पार किया और मुनि वचनोंसे शुध्दि देकर २१ इक्कीस ब्राह्मणों को जातीमें शामिल किया ऐसी व्यवस्था मिलती है । इसी सिल सिलेमे आषाढ मासमे जय देवने

अलमोढे पहाडमे यह वृत्तान्त सुनके अलमोढ के ब्राह्मणो कि सभामें बनवारि पण्डित काइाल और चतुर्भुजकी कविता सुनाके उन सब जनों की आज्ञानुसार कृपाशंकरको परिवारके सहित शुध्द करके जाति शामिल किया यह सबके सब वर्षोंसे मुसलमान थे और संवत् विक्रमी १६५३ में हरिशंकर ब्राह्मणके यजमान २०० घर खत्रियोंके मुसलमान थे इनके प्रायः वीश वर्षेसें मेलमें आनेकी इच्छा थी जब बनवारिरामशर्म्मा का दिया हुआ प्रायश्चित्त देनेका शब्द सुना तब पुरोहितसे कहा तब सर्व जनोंकी आज्ञासे पुरोहित थानेश्वर आया और सभाकी आज्ञानुसार अपने यजमानोका प्रायश्चित्त किया और जाति शामिल करादिया बनावारि ब्राह्मण प्रसिध्द पुरुष था उनका मान कुरुक्षेत्रमें जारि है उन्होंने अपने बलसे जातिके सेवा हेतु पाठशाला ये बनादिया है पाठशालामें प्रथम संध्या आदिका प्रचार किया ऋषिकुल बनवाया वाद विद्यासीखनेकी घोषणाकी आपके सामने मुसलमान अधमरे हो जाते है जैसे शरभंगजीके पास रावणादि राक्षस नहीं जाते थे इसी तरह यवन दल उनके पास नहि आता है विक्रम सम्मत् १६५३ में बनवारि ब्राह्मणका तेज बल अधिकतर था इन्होंने ऐसा यश पाया है जिसका लेख कहातक लिखैं इन्होंने हजारोंही ब्राह्मणादिकोंको उपदेश देकर जाति उन्नतीकी है प्रोहितने ऐसीकीर्ति सुणाई यह प्राचीन प्रायश्चित्तका लेख है इसका पता त्रिपाठी विजय शरण ब्राह्मणसे मिला था मैंने उस लेखको लिख लिया है सबके पठन योग्यतामें होगा विक्रम सम्मत् १६८० में रतिराम जाटने आकर अपने गुरुजीसे कहा कि मैं नदिके ऊपर पार्थिव पूजा करताथा मुसलमानोनें आकर मेरेको मारा और मेरे घर आकर सबको पकड लिया और ग्राममें दंगा भारी मचा दिया आखीर एक उनके अला ऊदीन मोलवीने कहा तुम मुसलमान बनजावो तो तुमको माफ कर देंगे फीर हम सब मारे डरके मुसलमान बनगये आज दश वर्ष हुवा है अब हम लोग आपका आना सुनके खुशीसे आये है हम सव आपकी सेवा चाहते है यह वात गजानंदने जब सुनी तब उसी वक्त सभाकी मनसा रची विश्वेश्वर शर्म्माको बुलाकर सभा किया उन्होनें यथोचित शुद्धि देकर

सात सौ ७०० घर पवित्र किये और पंगतमे मिलाये इनका नाम (गुरुजी) हुवा ऐसेही अथर्ववेदके आज्ञापालक उपकारी विप्र जगत्गुरु हुवा करते हैं और आगे पढिये विश्वास घात रविशरणका विवाह दगेसे एक मालिन हुसेनासे धोखेसे कर दीया था जब माळूम हुवा तबतक तो कई घर और भी उसी कुल में व्याहे जा चुकथे ग्रामके लोग विरादर वगैरह सब रसममें खाना कच्चा पक्का सब खा चुके थे हाल कई बर्षोंके बाद माळूम भया तब क्या बने उन लडकीयोंको अच्छी तरेह माळूम था जब नगीनासे विवाह हुआ उस वक्त सब भेद खुला यह षडयंत्र मुलतान निवासी मोलवी कादर हुसेनने कीया था उसका यह काम था कि किसी तरहसे हिंदुओंको मुसलमान बनायाजावे करूइ ग्रामके रहनेवाले रमानाथ ब्राह्मणको धोखा देकर लडकीयोंके विवाह करादियेथे जब जातिच्युत होनेका विवाद आया उस समय मोवी कादर हुसेन बहोत खुश हुये एक रोज रमानाथ शर्माने सबसे मिलकर यह निश्चित किया कि भाइयो तुम इतना वादविवाद करके आपसमें क्यों बिगडते हो मैं काशीमें जाकर निरधार करवा दुंगा तब रमानाथ शर्माके अनुकूल होकर काशीजी आये और ब्राह्मणोंकी परिषद मे अपना प्रस्ताव उपस्थित कीया ॥ परिषदके मध्यमे हरिरामादि शर्म्माने कहा जगन्नाथ शर्म्माने लवंगीसे विवाह करके क्या प्रयश्चित किया था जो जाति बध्ध रहा और सभामे सब लडकीयोके बारेमें दरयफ्त करी तो सब लडकीयां हिंदुओंकी नीकली तब परिषदनें प्रायश्चितमें जगदीश यात्राकी आज्ञा दइ बिशेष प्रस्ताव इतिहास समुच्चयमें देखलेना वहांपर सब विस्तार पूर्वक लीखाहैं और पढिये तेजसिंह अमृत सरके रहनेवाले थे उसने एक खत्री इसाइकी लडकीसे विवाह किया जब जातिवालोको माळूम हुवा तब उन्होनें शिख और ब्राह्मणोंकी पञ्चायत करी तेजसिंहने अपना विवाहका सब हाल परिषदमें कह सुनाया बादमें परिषदनें गंगास्नान करवाया और शिख विधीसे शिख बना लिया परिषदने (पंचायतने) आखीरमे यह वचन कहा मोहनदासजीके वाक्यानुसार करनेमें कोइ हानी

नहीं है क्योंकि मोहनदासजीने रामानंदजीकी आज्ञानुसार हजारोही पतितोंको प्रायश्चित्त देकर पवित्र किये सुप्रसिद्ध उनके वाक्योंको प्रमाणके लिये सुना देते हैं जब कलियुगको आकर (२७००) वर्ष वीते तब बौद्धमत प्रवर्तक शाक्यसिंहका गुरू गौतमाचार्य्य हुवा उसने समपूर्ण तिर्थोंपर मठ नियत किये जो लोग उसके वशमें गये सब बौद्ध होंगये ओर सबने शिखा सूत्रका परित्याग कर दिया इस प्रकार दस करोड आर्य्य बौद्ध बनगये बादमें जब पांच लक्ष आर्य्य जो बौद्ध नहीं बने थे वह सब आबु पहाडपर जाकर इष्ट सिध्दिके लिये हवन किया बादमें चतुर्वेदके प्रभावसे अग्निवंशज राजाओंनें बौध्दोंको काटा इन पतितोंको पुनः शुध्दकर ओर वर्णाश्रमी बनाकर आर्य्यधर्ममें स्थित किया बादमें जब आर्य्यावर्तमें म्लेच्छोंका राज्य होगया तब म्लेच्छोंनेंभी बौध्दोंके तुल्य जगन्नाथादि प्रसिध्द नगरोंमें मसजिदे बनवाइ जो उनके काबुमे आये सो म्लेच्छ बनगये फिर तमाम आर्योंमें एक कोलाहल मचगया तब वैष्णव धर्मानुयायी कृष्ण चैतन्य के सेवक अपने गुरुसे योग्यशिक्षा लेकर जगन्नाथादि सातों पूरीयोंमे फैल गये उनमेंसे तथा रामानंदके शिष्योंमसे मोहनदास अयोध्यामें गया और वहां म्लेच्छोंके उपदेशों का खंडन करके उनको वैष्णव धर्म्मी बनाया माथेमें त्रिशुलाकार तिलक दिया गलेमें तुलसीकी माला पहराया और राम नामका उपदेश दिया वह समस्थ म्लेच्छ रामानंद के प्रभावसे शिष्योंद्वारा वैष्णव बनालिये गये और शेष आर्य अयोध्यामें रहने लगे बुद्धिमान् निंबादित्य काञ्चीपुरीमें गया और वहां म्लेच्छों के विरुद्ध उपदेश देकर सबको अपने वशमें करके वैष्णव बनाया उनके मस्तकमें वंश पत्रके तुल्य तिलक कंठमें तुलसीकी माला तथा गोपी वल्लभ मंत्रका उपदेश देता हुवा वैष्णव बनाने लगा विष्णु स्वामी हरिद्वारमें गया और वहां म्लेच्छोंके विरूद्ध प्रचार कर सबको वैष्णव बनाया एवं वाणी भूषणादि विद्वानेने काशी आदि स्थानोंमें जाकर सहस्रों म्लेच्छों को शुद्ध किया इन प्रमाणो को परिषदने मान्य करके तेजसिंहको और उसके स्वशुरको शिख बनाया और उनके भाई बिरादरीयोंने अंगीकार करलिया। और बावा जमना

दासने ७०० म्लेच्छों को मदुसुदन पुरमें शुध्द किया यह इतिहास शुध्द किये हुये मनुष्योंमेसे एक गजा॰र नामके सुनारने बाबा जमनादासकी स्तुती गाइ है वह यहां जो मिली है सो नीचे उधृत करता हुं ॥

॥ ❀ ॥ भजन ॥ ❀ ॥

गुरूकृपा सन्तसमागमसे तुने जगधर आज उबार दियो । मोहमदी डाकीनने हम सबको आप बिगाड दियो ॥ करि लूट पाट सब ठाठ लियो । फिर जबरन तुर्क बनाय लियो ॥ जब सतगुरु संत दयालु हुये सत सातको बेडा पार कियो ॥ चोटी रखवाई ि॰लक कंठी पहनाई दिया वर्णका भेष राज दौंडी पिटवाई पीट नगारा नगरमे चेला कहे पुकार ॥ तुर्क तुरसाई मिट गई सत सातका जन्म सुधारी ॥

अर्थः—ऐसे भजन और कवितादिक बहोतसे संत लोग गाया करते हैं और जगधरने सितार के ऊपर इन श्लोकोंको गाया था जो निचे लिखे जाते हैं इनके अर्थ हम पूर्व तेजसिंहके प्रायश्चित में दिखाये हैं ॥ ईनहि वाक्योंके प्रमाणसे जमुना दासने शुध्दि दी है ॥

नम्ना गौत्तमाचार्यो दैत्यपक्ष विवर्धकः । सर्व तीर्थेषुतेनैव यंत्राणि स्थापितानिवै ॥ तेषांमध्ये गतायेतु बौद्धाश्च सन् समंतत ॥ शिखासूत्रविही-नाश्च बभूवुर्वर्ण संस्कारा ॥ दशकोट्यः स्मृताः

आर्य्याः बभूवुर्बौद्धपन्थिनः पंचलक्षास्तदाशेषाः प्रययुर्गिरिमूर्द्धनि ॥ चतुर्वेद प्रभावेन राजन्याः वन्हिवंशजाः । चत्वारिंशभवायोद्धा स्तैश्चबौद्धाः समुज्झिताः ॥ आर्य्यास्तास्तेतु संस्कृत्य विन्ध्याद्रे दक्षिणे कृतान् तत्रैवस्थापयामासुवर्ण रूपान् समंततः ॥ यंत्राणि कारयामासुः सप्तष्वेव पुरीषुच तदधोयेगता लोकास्सर्वेते म्लेच्छतां गताः ॥ महत्कोलाहलंजातमर्य्याणांशोकारिणाम् । श्रुत्वाते वैष्णवाः सर्वे कृष्णचैतन्य सेवकाः । दिव्यं मंत्रं गुरोश्चैव पठित्वा प्रययुःपुरीम् ॥ रामानन्दस्य शिष्यो वैचायोध्यामुपागताः । कृत्वा विलोमंतं मंत्रं वैष्णवाँस्तान कारयत् ॥ भाले त्रिशूल चिन्हंच श्वेतरक्तं तदाभवत् । कण्ठेच तुलसीमाला जिह्वारामममयी कृता ॥ म्लेच्छास्ते वैष्णवाश्चासन् रामानन्द प्रभावतः । आर्य्याश्च वैष्णवामुख्या अयोध्यायांबभूविरे ॥ निम्बादित्यो गतो धीमान् सशिष्यः कांचीकांपुरीम् । म्लेच्छ यंत्रं राजमार्गे स्थितंतत्र ददर्शह ॥ विलोमंस्वगुरो मंत्रं कृत्वातत्रसचावसत् । वंशपत्र समारेखा ललाटे कंण्ठमालिका ॥ गोपीवल्लभ मंत्रोहि

मुखे तेषांरराजसः तदधोयेगता लोका वैष्णवाश्च बभूविरे ॥ म्लेच्छाः संयोगिनोज्ञेया आर्यास्तन्मार्ग वैष्णवाः विष्णुस्वामी हरिद्वारे जगाम स्वगणै र्वृतः । तत्रास्तिथं महामंत्रं विलोमं तच्चकारह ॥ तदधो येगतालोका आसन् सर्वेच वैष्णवाः ॥

अर्थः--गौत्तमाचार्य्यने बौध्दधर्म प्रचार किया था तब भगवान् शंकराचार्य्यने उन्को शास्त्रार्थ करके हराया और उनको प्रायश्चित्त देकर स्वस्वधर्म में रत किया यह लेख पूर्व दिया है और अग्निवंशज राजाओंने भी बौध्द धर्मानुयायोंको मारडाला जब यवनोंकी वृध्धि हुई तब श्रीकृष्ण चैतन्य सेवकोने तथा रामानन्द के शिष्योंने म्लेच्छों को वैष्णव बनाये इसी तरह निम्बादित्य, विष्णु स्वामि इत्यादिकोने म्लेच्छा धर्मगत आर्य्यों को धर्म शास्त्रानुसार प्रायश्चित्त देकर शुध्द किया यह लेख विशेष तया नाभाकृत भक्तमालके वैष्णव महात्म प्रकरणमें लिखा है । संवत् १८८५ के सालमें एक रंभा नामकी ब्राह्मणी काशीमें पण्डित शिवरामशर्म्माके पास में आकर कहा कि मैं गोविन्द भट्टकी पुत्री हूँ ब्याह के बाद मैं जब गंगा स्नानको गई तब मेरेको यवन उठा लेगये आप मेरे पिताके शिष्य हैं मेरे लिये उपकार करीये मै पतिके पास में गइ तो उन्होंने यह आज्ञा करी क तू अच्छुत होगई तेरेको ब्रह्म सभा ग्रहण करेगी तो मैंभी ग्रहण करूंगा अन्यथा नहिं ? तब रंभा बोली शास्त्रीजी ! चाहे पती मेरेको अंगीकार करे या न करे परन्तु जिस तरहसे मेरा प्रायश्चित्त होसक्ता हो वैसा यत्न करिये बहोतसी बात चित के पश्चात् जब रंभाके आग्रह को अत्यन्त देखा तब पण्डित जीने कहा कि बाइजी जबतक ब्राह्मणोंकी सभा ऋषी वाक्यानुकुल न होगी तब तक प्रायश्चित्त विधान नही होगा तब रंभाने कहा कि जैसी धर्म मर्य्यादा हो वैसाही करिये तब गोविन्द भट्ट और रंभाका पति इन्होकी अनुमति पूर्वक

काशी राज महाराजकी धर्म सभा में यह प्रार्थना सुणाइ गई. तब सभाने दिन नियत किया और ब्रह्म सभाकी सहमतसे देवि प्रसाद शर्म्माने कहा कि बाईजी तुम्हारे निष्कृतीके अर्थ सभाने यह निश्चय किया है कि शीसा गरम करके तुम्हारे मुखमे डाल देना. उसको पीतेही तुम्हारा देहांत हो जायगा यह वार्ता सुणकर रंभाने सविनय सभासे प्रार्थना करी कि शीसा पीनेके पश्चात् मैं पापसे मुक्त हो जाऊंगी सभाने जवाब दिया हो जावेगी अच्छा तो बताइये मैं तो हाजरहु सभाने तो यह प्रथमही निश्चय किया था कि जो गत पूर्व महाराष्ट्र शासनमें जैसा प्रायश्चित मुसलमान हुये ब्राह्मणोंको दियागयाथा अनन्तर महर्षि देवलके वाक्योंको और पूर्वापूर्व व्यवस्थाको विचारकर प्रायश्चित नीयत किया क्यों कि उक्त महर्षिकी आज्ञा है ॥

अतः परं प्रवक्षामि प्रायश्चित मिदंशुभम् । स्त्रीणां म्लेच्छैश्चनीतानां, बलात्संवेशनेक्काचित ॥ (महर्षि देवल) ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या, शूद्रानीलामदा-न्त्यजैः । ब्राह्मण्या कीदृशं न्यायं प्रायश्चितं विधीयते ॥ ब्राह्मणी भजते म्लेच्छं, अभक्षं भक्ष-येत् यदि ॥ पराकेणततः शुद्धिः पादेनोत्तरतोत्त-रान् ॥ न कृतं मैथुनंताभिः अभक्षं नैवभक्षितम् ॥ शुद्धिस्तदा त्रिरात्रेण म्लेच्छान्नं नैव भक्षिते ॥

अर्थ—महर्षि देवलने म्लेच्छोद्वारा पकडी गई स्त्रियोंके प्रायश्चितयों बताया है । म्लेच्छद्वारा पकडी गई ब्राह्मणीने यदि अभक्ष भक्षण किया होतो "पराक" व्रत करके वह शुद्ध हो सकती है । क्षत्रिया त्रिपाद "पराक" से, वैश्यकी स्त्री अर्ध्द "पराक" से, और शूद्रा पादैक "पराक" से, शुध्द होतीं है । यदि उन्होंनें अभक्ष भक्षण न करके केवल म्लेच्छोका

अन्नमात्रही खाया हो और मैथुन भी न किया हो तो उनकी शुद्धि तीं रात्रिके व्रतसे हो जाती है ।

गृहीतास्त्रीबलादेव म्लेच्छैर्गुर्वी कृतायदि ॥ गुर्वी न शुद्धि माप्नोति, त्रिरात्रेणैतराशुचिः ॥ योषागर्भ विधतेया म्लेच्छात्कामादकामतः ॥ ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्याशूद्रावर्षोत्तराचया ॥ अभक्षभक्षणं कुर्यान्तथाः शुद्धि कथं भवेत ॥ कृच्छं सान्तपनं शुद्धिर्घृतैर्यो नेश्चपाचनम् ॥

अर्थ—जबरन पकडकर म्लेच्छोंसे गर्भवतीकी हुई स्त्रियोंकी तीन रात्रिके व्रतसे शुध्दि नहीं हो सकती किन्तु अपनी इच्छासे नहीं परन्तु म्लेच्छोंके वलत्कार से जिस स्त्रिको गर्भ रहगया वह (ब्राह्मणी, क्षत्रिया, वैश्या तथा शुद्राको कोइभी वर्णकी हो) और उसने अभक्ष भक्षण किया हो तो यह स्त्री अपनी योनिघृतसे विपाचन कर "सान्तपन" कृच्छ्र व्रत सेवन करनेपर शुध्द हो जाती है ॥

यह रीति अत्रिसंहितामें भी इस प्रकार है ॥

सकृद्भुक्त्कान्तियानारी म्लेच्छैर्या पापकर्मभिः ॥ प्राजापत्येन शुध्येत, ऋतुप्रस्रवणेनभु ॥ (२०१) बलाद्हृता स्वयंवापि परप्रेरित यायदिसकृद्भुक्ता तुयानारी प्राजापत्येन शुद्धयति (२०२)

अर्थ—महर्षि देवल और अत्रि सहिता (१९५—१९६)

असवर्णेन योगर्भ स्त्रीणां योनौ विषिच्यते । अशुद्धासाभवेन्नारी यावच्छल्यं नमुञ्चति [५०] विनःसृते ततोशल्ये, रजसो वापिदर्शने, तदासाशुध्यते नारी विमलं काञ्चनंयथा ॥ सगर्भो दीयतेऽन्यस्मै स्वयंग्राह्यानकहचित् ॥ स्वजातौ वर्जयेद् यस्मात्संकरःस्याद्ततोऽन्यथा ॥४२॥

अर्थ—परपुरुषकी प्रेरणासे, पापकर्मोंसे म्लेच्छोंके बलत्कार से किंवा स्वयं अपनी इच्छासे स्त्री यदि एकभी समय भोगी गयी होतो वह ,, ऋतु, प्रस्त्रवणके बाद "प्राजापत्य" व्रतसे शुध्द हो जाती है। महर्षि देवलके मतसे—ऐसे असवर्णी (मनुष्य) से योनिमें धारण (ग्रहण) किये हुये गर्भ से वह गर्भवती, स्त्री जबतक शल्य (जरायुज गर्भ) प्रसवकर त्याग न देगी तबतक वह स्त्री अशुध्दही रहेगी। उस शल्य (गर्भ) के स्त्रवित हो जानेपर, फिर जब उस स्त्रीको रजो दर्शन हो, तभी वह उपरोक्त "प्राजापत्यादि" व्रत करके निर्मल सुवर्णके समान हो जायगी" और वह (गर्भ प्रस्त्रवित) बालक " संकर होनेपर उसे स्वयं न लेकर (ग्रहणकर) अन्या संकर—जातिको अथवा पतितोंको दे देवे इत्यादि विचारकर तत्पश्चात् रंभाके वास्ते यह निश्चय किया जो रंभाका गर्म शीसा पीनेमें पूर्ण साहस दीख जावे तो उस समयमें रंभाके मूखमें पञ्चगव्य छोड दिया जावे सभाकी आज्ञासे एक त्रिंशती २१ ब्राह्मणोंके समक्ष जो कार्य्य कियागया वह यह है प्रथम रंभाको स्नान कराया बादमें स्वस्तिवाचन पूर्वक देवाराधन किया और एक कटोरीमें हवनाग्निमें शीसा तपाया गया और रंभासे कहा देखो बाई प्राणभत खोवो इसको पीतेही तुम मरजावोगी इत्यादि वाक्योंसे रंभाके साहसको अचलित देखकर रंभाके मूखमें पञ्चगव्य छोड दियागया

और शास्त्राज्ञानुसार कृतःप्रायश्चितका व्यवहार किया गया यह प्रमाण हम पहिलेही लिखआये हैं. **प्रायश्चितेतु चरितेति ॥** यह श्लोक पढलेना ॥ रम्भाका प्रायश्चितोद्धारित लेख काशी बटक भैरव महन्त टीकमदासजीके स्थानसे जानकीवल्लभ शरण शर्म्मा द्वारा लब्ध हुवा ॥

प्राचीन कालसे विधर्मि (वेदच्युत) हिन्दुओंको वर्णा श्रम धर्ममें लाते हुये व्रात्यस्तोम नामक शुद्धिकी एक क्रिया होती थी जिससे उन व्रात्योकी गणना द्विजवर्णोंमें हो जातीथी व्रात्यस्तोमका वर्णन सामवेदके ताड्यब्राह्मण (प्रकरण १७) और लाट्यायन श्रौत सूत्र (६–८) में लिखता है बौद्धधर्म्मकी उन्नतीके समयमें करोडा वैदिक मतावलंबी (हिन्दु) बौद्ध हो गये थे परन्तु उत्कृष्टधर्मकी अवनतिके समय वे पीछे हिन्दू धर्मको ग्रहण करते गये उस समय व्रात्यस्तोम जैसी कोई शुद्धिकी क्रिया होती रही हो ऐसा पाया नहीं जाता परन्तु इस लेखसे यह जाना जाता है समयके अनुकुल कोई दूसरी क्रिया शुद्धिमें होती होगी (यह लेख राजपूताने इतिहासके पृ० १० की टिपनीमें लिखा है और देखो छांदोग्य उपनिषद (२) रामायण (३) ऋग्वेद अ० ८ अ० २ सू० ६५--६६ के ऋषि (४) इस तुलाधार वैश्यसे ब्राह्मणोंने शिक्षा प्राप्तकी थी देखो महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २६३ (५) धर्मव्याध नामक चाण्डालने कौशिक ऋषिको उपदेश दिया था देखो वनपर्व अध्याय २०६--२१६ तक ऋग्वेद मंत्र १० अ० ३ सू० ३० से ३४ तक के ऋषि ८ ऋग्वेद मंत्र १ अ० १७ सू० ११६ से १२६ तक के ऋषि यह अंगदेशके राजाकी दासी के पुत्र थे देखो सायणभाष्य और महाभारत (८) याज्ञवल्क्य ऋषिकी स्त्री (३) ऋग्वेद मंत्र १ अ० ३३ सू० १७९ तकको प्रचारिका ९ गार्गीने याज्ञवल्क्यसे शास्त्रार्थ भी कियाथा नेपाल राज्यकी हिन्दू (आर्य्यप्रजामें यह रिवाज अबतक प्रचलित है ॥

श्री

प्रयागराजमें परिषद.

हरनाम शास्त्रीके शिष्य भजनलाल जो काम वश होकर अभक्ष्यभक्षण अगम्यागमन होगया था उसकी शुध्दिः—

विक्रम संवत् १९३८ माघ वदि ११ के दिन प्रयागराजमें कान्तानाथ ब्रह्मचारी, राममिश्र शास्त्री, हरनाम शास्त्री, शिवसहाय शास्त्री, विशुध्दानंद सरस्वती माहंतराम प्रपन्न देवरा, महाराजा रिवानरेश और महाराजा काशी नरेश. इत्यादि महानुभावोंकि अध्यक्षतामें निचे लिखे शास्त्रप्रमाणोंसे प्रायश्चित दियागया ॥

शरीरं धर्म सर्वस्वं रक्षणीयं प्रयत्नतः ।
शरीरात्सूयते धर्मः पर्वतात्सलिलं यथा ॥
(शंख० अ० १७)

अर्थ—शरीर धर्मका सर्वस्व है, शरीरसे धर्म होता है जैसा पर्वतसे जल इस लिये प्रयत्नसे शरीरकी रक्षा करनी चाहिये ॥

अकुर्वन् विहितं कर्म निन्दितञ्च समाचरन् ।
प्रसक्तश्चेन्द्रियार्थेषु, प्रायश्चित्तीयतेनरः ॥
(मनु० ११-४४)

अर्थ—विहित कर्मोंके न करनेसे निन्दित कर्मोंके सेवन तथा इन्द्रिया शक्तिसे मनुष्य प्रायश्चितके योग्य हो जाता है ॥

एवं मनुष्यका अन्तःकरणावच्छिन्न मैले दर्पणकी नांइ हो जाता है और मोहावरणसे आच्छादित होकर अभक्षभक्षणादि पापाचारसे मलिन वा अपवित्र हो जाता है, तावतकवी उसको युक्त रीतिमे शुध्द न किया जाने अतएव ऋषियोंने आज्ञा दी किः---

एवमस्यान्तरात्मा च लोकश्चैव प्रसीदति ॥
(पा० प्रा० प्र० ३-२२८)

अर्थ--इस (प्रायश्चित) से प्रायश्चितीका अन्तरात्मा और लोग प्रसन्न हो जाते हैं, क्योंकि प्रायश्चितका अर्थही पापोंसे छुटना और निर्मलता को स्वीकार करना है ॥ जैसेः—

प्रायःपापं विजानीयाच्चित्तं वैतद्विशोधनम ।

अर्थ--प्रायःनाम पापका है और चित्त उसकी शुध्दि है, तथा

प्रायोनामतपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते ।
तपो निश्चय संयुक्तं प्रायश्चितं तदुज्यते ॥

अर्थ--प्रायःनाम तपका है और चित्तनाम निश्चयका है तप और निश्चयको प्रायश्चित कहते हैं। अर्थात् वह साधन जो शास्त्रों तथा देशकालानुसार विद्वान् पुरुषोंने नियत किये हो जिनके अनुष्टानसे पातकी के आत्मा तथा जातिकी प्रसन्नता हो, उसका नाम प्रायश्चित है ॥

अभोज्यानांच्च भुक्त्वान्नं स्त्री शूद्रोच्छिष्ट मेव च ।
जग्ध्वा मांस मभक्ष्यं च सप्तरात्रं यवान् पिबेत् ॥
(मनु० ११-१५२)

अर्थ--अभोज्य अर्थात् पतित म्लेच्छ आदिकोंका अन्न खाकर स्त्री और शूद्रका जूठा अन्न खाकर तथा अभक्ष्य मांस (गोमांसादि) खाकर सात रात्रि जौ के सत्तु वा (लप्सी) खाने से शुध्दि होजाती है। एवं अत्रिस्मृतिः पृ० ७ श्लो० ७२ ॥

अमेध्य रेतो गोमांसं चांडालान्नं मथापि वा।
यदि भुक्तं तु विप्रेण कृच्छ्रं चान्द्रायणं चरेत् ॥
(पराशर—११-१)

अर्थ--अपवित्र वीर्य--गोमांस तथा चांडाल का अन्न खाकर ब्राह्मण कृच्छ्र चान्द्रायण से शुध्द होता है ॥ (ऐसे स्थानोंपर जहां केवल ब्राह्मण का ही नाम हो (क्षत्रिय विट् शूद्राणां तु पादपाद हानिः) का सिध्दान्त याद रक्खें अर्थात् नीचे २ वर्ण में एक २ पादकम हो जाता है ॥

अगम्या गमनं कृत्वा मद्य गोमांस भक्षणम् ।
शुद्ध्येच्चान्द्रायणाद्विप्रः प्राजापत्येन भूमिपः ॥
वैश्यः सांतपनाच्छूद्रः पंचाहो भिर्विशुद्ध्यति ॥
गरुड़ पु० मू० अ० २१४-श्लो० ४९

अर्थ - न गमन करने योग्य स्त्री से गमन कर, मद्य और गोमांस भक्षण करके ब्राह्मण चान्द्रायण व्रत करे, क्षत्रिय प्राजापत्य वैश्य सांतपन और शूद्र पांच दिनके व्रत से शुध्द हो जाता है ॥

भुंक्ते ज्ञानाद् द्विजश्रेष्टश्चाण्डालान्नं कथंचन ।
गोमूत्र यावकाहारो दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥
पराशर० ६-३२

अर्थ- ब्राह्मण यदि ज्ञान पूर्वक चाण्डाल का अन्न खाले. तो दस दिन यव खाने तथा गो मूत्र पीनेसे शुध्द हो जाता है ॥

अन्त्यजोच्छिष्ट भुक् शुद्ध्येत् द्विजश्चान्द्रायणेन च।
चाण्डालान्नं यदा भुंक्ते प्रमादादैन्दवं चरेत् ।

क्षत्रजातिः सान्तपनं पक्षो रात्रं परे तथा ॥
गरुड़ पु० आ० २१४–१२

अर्थ–द्विज अन्त्यजो का जूठा खाकर चान्द्रायण व्रत से शुध्द होता है यदि ब्राह्मण प्रमादसे चांडालका अन्न खाले तो चान्द्रायण क्षत्रिय सांतपन वैश्य पाक्षिक और शूद्र एक रात्रि के व्रत से शुध्द हो जाता है ॥

चाण्डालपुल्कसादीनां भुक्त्वा गत्वा च योषिताम्
कृच्छ्राष्टमाचरेत्कामाद् कामादैन्दवं चरेत् ॥
यमस्मृ० २८

अर्थ–इच्छा पूर्वक चांडाल आदिकों का अन्न खाकर और उनकी स्त्रियों से मैथुन कर आठ कृच्छ्र व्रत करने से शुध्द हो जाता है ॥

असंस्पृष्टेन संस्पृष्टः स्नानं तेन विधीयते ॥
अत्रि० श्लो० ७३

अर्थ–न स्पर्श करने योग्य से स्पर्श कर केवल स्नान से शुध्द होजाता है

सर्वान्त्यजानां गमने भोजने संप्रवेशने ॥
पराकेण विशुद्धिः स्याद् भगवान त्रिरब्रवीत् ॥ १७॥

अर्थ--भगवान् अत्रि कहते हैं कि सम्पूर्ण अंत्यज जातियों के अन्न खाने से उनमें गमन करने से पराक व्रत से शुध्दि होती है ॥

संस्पृष्टं यस्तु पक्वान्न मन्त्यजैर्वाप्युदक्यया ॥
अज्ञानाद् ब्राह्मणोऽश्नीयात् प्राजापत्यार्द्धमाचरेत् ॥
अत्रि० १७२

अर्थ--ब्राह्मण अन्त्यज तथा रजस्वला के स्पर्श किये पक्व अन्न को यदि अज्ञान से खाले तो आधा प्राजापत्य व्रत करे, और ज्ञानसे खाले तो सारा।

अन्त्यजानामपि सिद्धान्नं भक्षयित्वा द्विजातयः ।
चान्द्रं कृच्छ्रं तदर्द्धं च ब्रह्म क्षत्र विशांविदः ॥
अंगिराः—२

अर्थ--अन्त्यजों के भी पकाए अन्नको खाकर ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य क्रम से चान्द्रायण, कृच्छ्र और आधा कृच्छ्र कर शुध्द हो जाते हैं ॥

कापालिकान्न भोक्तृणां तन्नारी गामिनां तथा ।
कृच्छ्राब्दमा चरेज् ज्ञानाद् ज्ञानादैन्दवं द्वयम् ॥
यम—२१

अर्थ--ज्ञानसे कापालिकों का अन्न खाकर और उनकी स्त्रियोंसे गमन कर वर्ष पर्यन्त कृच्छ्र व्रत करे और यदि अज्ञान से करे तो चान्द्रायण व्रत करे ॥

महापातकिनामन्नं योऽद्याद् ज्ञानतो द्विजः ।
आज्ञानात्तप्तकृच्छ्रं तु ज्ञानाच्चान्द्रायणं चरेत् ॥
वृद्दपा० ६—१८३

अर्थ--जो द्विज महापातकीयों के खाले तो अज्ञान से खाने में तप्त कृच्छ्र व्रत करे। और ज्ञान पूर्वक खानेमें चान्द्रायण व्रत कर शुध्द होजाता है ।

अभक्ष्य भक्षणे विप्रस्तथैवा पेयपान कृत् ।
व्रतमन्यत् प्रकुर्वीत वदन्त्यन्ये द्विजोत्तमाः ॥
वृ० पा० ६—२०६

अर्थ--कई विद्वान् ब्राह्मणोंका कथन है कि ब्राह्मण अभक्ष्य भक्षण कर तथा अपेय पान कर कोई एक व्रत कर शुध्द हो जाता है ॥

शैलूषीं रजकीं चैव वेणु चर्म्मोपजीवनीम् ।

एताः गत्वा द्विजो मोहाच्चरेच्चान्द्रायण व्रतम् ॥
संवर्त्त— १५४

अर्थ—द्विज मोह से नटी, रजकी, डूमणी, अथवा चमारी से संगम करके चान्द्रायण व्रत करे ॥

चांडालीं च श्वपाकीं वा अनुगच्छति यो द्विजः ।
त्रिरात्र मुपवासीत विप्राणा मनुशासनात् ॥ ५ ॥
सशिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।
ब्रह्म कूर्च ततः कृत्वा कुर्य्याद् ब्राह्मण तर्पणम् ॥ ६ ॥
गायत्रीं च जपेन्नित्यं दद्याद् गो मिथुनद्वयम् ।
विप्राय दक्षिणां दद्यात् शुद्धिमाप्नोत्य संशयम् ॥ ७ ॥
(पारा० १०)

अर्थ—जो द्विज चांडाली वा श्वपाकी का संग करे । वह ब्राह्मणों की आज्ञानुसार तीन दिन उपवास कर शिखा सहित मूंडन करा कर, अनन्तर ब्रह्म कूर्च करके ब्राह्मणों को प्रसन्न करे, नित्य गायत्री जप करे और दो गौ का दान करे तो शुद्ध हो जाता है ॥

म्लेच्छान्नं म्लेच्छ संस्पर्शो म्लेच्छेन सह संस्थितिः
वत्सरं वत्सर.दूर्ध्वं त्रिरात्रेण विशुद्धयति ॥ देवल०

अर्थ—जिसने एक वर्ष वा वर्ष से अधिक म्लेच्छों का अन्न खाया हो म्लेच्छ सहवास किया हो उसकी शुद्धि तीन दिन व्रत करने से होती है ॥

म्लेच्छैः सहोषितो यस्तु पंच प्रभृति विंशतिम् ॥
वर्षाणि शुद्धिरेषोक्ता तस्य चान्द्रायण द्वयम् ॥

अर्थ—जो पांच वर्ष से लेकर बीस वर्ष पर्यन्त म्लेच्छों के साथ रहा हो उसकी शुद्धि दो चान्द्रायण व्रत करने से हो जाती है ॥

हरनाम शास्त्रीजीके संग्रह किये हुए वाक्योंको सुनकर परिषद (सभा) ने कहा कि आपके मतानुकूल यह निश्चय होता है कि (२०) वर्ष के पश्चात् शुध्दि नहीं देना, परंतु आप सम्मति वाक्यको सुनीये ॥

आप यदि एसा मानोगे तो पूर्वापर विरोध आवेगा और जब कभी परिषद (सभा) में प्रायश्चित्तीका प्रायश्चित निश्चय हो जाता है। वही मान्य हो जाता है. जैसे:—

मुनिवक्त्रोद्गतान् धर्मान् गायन्तो वेद पारगाः ।
पतंत मुद्धरेयुस्तं—धर्मज्ञाः पाप संकरात् ॥
(पराशर अ० ६–३५)

अर्थ—ऋषि–मुनियोंके मुखसे निकले हुए धर्मोका स्मरणकर, धर्म शास्त्रोंका अभ्यास करनेवाले तथा बेद पारंगत धर्मज्ञ ब्राह्मण, पापीको प्रायश्चित देकर पापसमुदायमेंसे उधार करे !

शरीरं बलमायुश्च वयःकालंच कर्मच ।
समीक्ष, धर्मविद् बुद्ध्या प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ॥
(अ० १–श्लो० १६)

तथाच- देशं कालं वयः शक्तिं पापंचावेक्ष सर्वतः ।
प्रायश्चित्तं प्रदातव्यं धर्मविद्भिर्मनीषिभिः॥
(बृद्धहारीत अ०९श्लोक २९७)

अर्थ—धर्मवेत्ता-बुध्दिमान् ब्राह्मण,-अपनी बुध्दिसे जिसको प्रायश्चित्त देना हो उसके, शरीर, आयु अवस्था, समय कर्म और देशकी सब रीतिसे विचारकर ही प्रायश्चितकी अवस्था देवें ॥।—

एवं महर्षि अङ्गिरा के वाक्यों से—

आपद्धर्मेषु यत्प्रोक्तं यच्चसानुग्रहं भवेत् ।
परिषद सम्पदश्चैव, कार्य्याणांच बलाबलम् ॥
प्राप्यदेशंच कालंच, यश्चकार्यान्तरं भवेत् ।
परिसंचिन्त्य तत्सर्वं, प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥
सर्वेषां निश्चितं यत्स्यात्--यश्च प्राणान्नघातयेत् ।

अर्थ--आपत्धर्मोक्त प्रायश्चित्त का, तथा जिस प्रायश्चित से पापीका उपकार हो सकता हो उस प्रायश्चित्ती के पापके स्वरूप का, बलाबल का, परिषद (सभा की योग्यता) का, (पापी की) सम्पत्ति का, देश काल का, और उस (पापी) से सम्बन्ध रखने वाली अन्य सब बातोंका विचार करके पापीका प्रायश्चित्त देवैं ! और प्रायश्चित्त भी ऐसा देना चाहिये कि जिससे उनका प्राणनाश न हो !!! भगवान् मनु भी कहते हैं कि:—

अनुक्त नीष्कृतीनांतु पापानामपनुत्तये ।
शक्तिं चावेक्ष्य पापं च प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ॥
(मनु अ. ११ श्लो. २१०)

अर्थ--जिनका प्रायश्चित्त नहीं कहा है उनका पाप दूर करने को प्रायश्चिती (पापी) की शक्ति (सामर्थ्य) और उनके पापपर ध्यान देकर प्रायश्चित्त नियत करैं ॥

अनिर्दिष्टस्य पापस्य तथोपपातकस्य च ।
तच्छुद्ध्यै पावनं कुर्य्यात्चान्द्रायणं समाहितः ॥
(वृ० पा० ६--१११)

अर्थ--जिन पापों का उपपापोंका वर्णन नहीं किया गया उन सब की शुध्दिके लिये चान्द्रायण व्रत करना चाहिये ।

मैंने पीछे दर्शाया है कि (देशकालं वयः शक्ति) के अनुसार में न्यूनाधिकता हो सक्ती है ॥

उक्तवाक्योंके पश्चात् परिषद् (सभा) ने आपसमें विवाद करके गायत्री अनुष्ठान वेद पाठ प्राणायाम् और गोदान से शुध्दि देना नियत किया परिषद (सभा) ने कहा क्या आप एक पुरश्चरण गायत्री जपका वेद पाठ गोदानादि व्ययका भार उठा सकोगे, क्या व्यय होगा सभाने बताया (३०००) के अंदाजन होगा तब प्रायश्चितीने कहा, हा कर सकेंगे हमको प्रायश्चित विधी महात्म सुना दिजीये अनंतर जप, पाठ करनेवालोंका प्रबंध कर दीजीये पश्चात् परिषद (सभा) ने उत्तर दिया कि तुम्हारे गुरू हरनाम शास्त्रीजी परिषद (सभा) के नियत किये हुए प्रायश्चित करानेका प्रबंध करेंगे गुरू व गुरूवंश के वर्तमान होते हुए शाखान्तरका अधिकार नहीं है और न यह सभाका काम है इत्यलम् ॥

पाठकगणो इस परिषदका मूल कारण पढिये धर्मवेत्ता ब्राह्मणजन जब न्यायसे धर्माधर्म का विचार करते हैं तब ईश्वरसे डरकर सूक्ष्म विचार करके निर्णय करते है भजनलाल शर्म्मा पहेले स्वामी विशुध्धानंद सरस्वती के पास जाकर अपने पापका परिचय दिया और प्रायश्चितकी याचना करी सकल मै मांसीक धर्मके जाणनेवाले स्वामीजीने कहा तुम कीस शाखाके ब्राह्मणहो और तुम्हारे गुरू कोन है तब उन्होने कहा हरनाम शास्त्रीका मैं शिष्य हुं परंतु जब कभी समयपर गुरूकी सेवा चाहितो उन्होनें मेरेको यह सुनाया कि—

दुराचारस्य विप्रस्य निषिद्धाचरणस्यच ।

अन्नं भुक्त्वाद्विजः कुर्य्या द्दिनमेकम भोजनम् ॥
(पराशर १२।५७।)

अर्थः–दुराचारी और निषिध्द आचारवाले ब्राह्मणोत्पन्नका अन्न खाकर द्विज एक दिन उपवास करें ॥

क्रिया हीनश्च मूर्खश्चसर्वधर्म विवर्ज्जितः ।
निर्दय सर्व भूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते ॥
अत्रि० ३८१

अर्थः—जो ब्राह्मणके गृहमें उत्पन्न होकर क्रियाहीन हो, अध्ययनाध्यायनादि धर्मसे रहित हो, निर्दय हो वह चाण्डाल है ॥

मेरे गुरू ऐसा कहते हैं स्वधर्ममें रत्तपुरुषोकीही सेवा और अन्नग्रहण करना चाहिये चातुर्यवर्णमें कोईभी हो ऐसा आपस्तंभ कहते हैं ॥

और मैंतो इस बातको अच्छी तरहसे जानता हुं कि गुरूद्रोहीको अग्निमें जलकर प्राण देना पडता है इस हेतुसे मैं कभी भी गुरूका अपमान नहीं कर सक्ता मेरी तो सेवा और अन्नभी ग्रहण नहीं करते तदन्तर स्वामीजीने इस कथनको सुनकर हरनाम शास्त्रीको लिख भेजा कि प्रायश्चितकी चाहना करने वालोंको शास्त्रविधीसे प्रायश्चित देना । यह तो आपका शिष्य है, आप महर्षि वाक्यानुकूल परिषद करके उध्धार करो तब शास्त्रीजीने यह निर्णय किया कि शंख–तस्य गुरोर्बान्धवानां इस वाक्यको विचारकर अपने शिष्यसे कहा कि परिषद जो निर्णय करे उसको मान्यकरना पडेगा । बादमें मनुके अ० ११ में ८३--८४ के वाक्योंके अर्थको विचारकर सभाका प्रारंभ किया (मनुवाक्य पण्डित बनवारीकी परिषदमें लिखे हैं ॥

इनही शास्त्रवाक्योंको विचारकर उन्होंने प्रयागराजमें उक्त शास्त्रीओं और माहाराजाओं के समक्ष में परिषद करके प्रायश्चित दिया था । परिषद

ऐसी होनी चाहिये जीसमें धर्मवेत्ता ब्राह्मण, राजा महाराजा, गुरू, और बांधवादि हो। उन्होंके सन्मुख अपने पापका परिचय देकर प्रायश्चित करालेवे और इसी परिषिदमें स्वामीजीके जो भक्त थे उनको यह सुनाया जीन कारणोसे पुरुष पतित होता है, उसी कारणोसे स्त्री भी पतित होती है। परंतु जीस पातकसे संग्रह हो उसका आधा प्रायश्चित स्त्रीसे कराना चाहिये, और गमनमें ऐसा भी कहा है कि ॥

चाण्डालं पुल्कसं चैव श्वपाकं पतितंतथा।
एतान् श्रेष्टाः स्त्रियोगत्वा कुर्य्युश्चान्द्रायणत्रयम्
[संवर्त० १७३]

श्रेष्ठ स्त्रियें अर्थात् ब्राह्मणी आदि चांडालादि नीचसे संसर्ग कर तीन चान्द्रायण व्रत करे ॥

रजकश्चर्म कारश्चनटो वरुड एवन्च।
कैवर्त मेदभिल्लाश्च सप्तैतेऽन्त्यजाः स्मृताः १६९
एतान् गत्वास्त्रियो मोहाद् भुक्त्वाच प्रतिगृह्यच
कृच्छाब्द माचरेत् ज्ञानाद ज्ञानादेवतद्द्वयम् १९७[अ०]

अर्थः—रजक, चमार, नट, बरूड, कवर्त, (मल्लाह) मेद, और भील यह सात अन्त्यज हैं। जो स्त्री इन पूर्वोक्त अन्त्यजोंसे सङ्ग करे। इनके खाले अथवा ले लेवे, वह यदि ज्ञानसे हो तो वर्षभर कृछ्र व्रत करे और यदि अज्ञानसे हो तो दो कृछ्र व्रत करे। इत्यादि स्त्री पक्षके बहोत प्रमाण देकर और रसिक बिहारी शर्म्मा दुबेजीको परिषदके सामने बुलाकर आज्ञा दी कि आप द्रव्यवान हे अपनी स्त्रीसे (६) कर्ष की सुवर्ण की गाय, एक कर्ष सुवर्णका बचा दान करवाके अपने आचार्य्य को दो

मान्यवरो इस विषय को धर्मवेत्ता ब्राह्मणजन विचारे कि ऐसे महानु भाव होकर भी स्वामी विशुध्धानंद सरस्वतीजीने अपने भक्तोंको एकांतमें प्रायश्चित नहीं दिया और इस बातको परिषदने भी मान्य किया ॥

(मेरामन्तव्य)

यदि मनमें आर्य्यत्वकी इच्छा हो तो पहले मनस्ताप, इसके बाद म्लेच्छत्वके अभिमानका त्याग और म्लेच्छत्वके अपवादके अभिमानका त्याग प्रायश्चितकी इच्छा, श्रुतिस्मृति पुराणोंके वाक्यमें विश्वास, पूर्व प्रायश्चित के उपदेश करनेवाले के वाक्यमें विश्वासकर प्रायश्चितके उपदेश करनेवालेकी सेवा, इसके बाद उसके बताये हुय पश्चात्ताप उपवास गङ्गा स्नानकर भक्तिशास्त्रसे प्रदर्शित राम, कृष्ण, शिव इत्यादि मंत्रोकी दीक्षा लेनेसे म्लेच्छत्वरूप मलको दूरकर अपने आर्य्यत्वका आविर्भाव हो सक्ता है ॥

शुद्धि प्रभाकर.

पतितोद्धारोत्तर भाग प्रारम्भः ॥

॥ श्री सीताराम चंद्राभ्यां नमः ॥

श्लोकः—शुद्धि प्रभाकरं पंच्मि नत्वा, सीतापति हरिम् वेद वेदाँग सारंयत् धर्मशास्त्र सुसम्मतम् ॥ १ ॥ यां दृष्टा यमुनाँ पिपासुर निशं व्यूहो गवांगाहते विद्युद्वानिति नोलकंठनिवहो यां द्रष्टु मुल्कंठते । त्रस्तं सा य तमाल पल्लव मिति छिदंति यां गोपिकाः कान्तिः कालिय शासनस्य वपुषः सापावनीपातुनः ॥ २ ॥

अर्थः—श्रीरामचन्द्र जी को प्रणाम करके वेद वेदांगो का सारभुत और धर्मशास्त्र का सुसम्मत शुद्धि प्रभाकर नाम ग्रंथ लिखता हूं । जिस यमुनाको देख करके गौत्रों का समूह पिपासा युक्त होकर अवगाहन करती हैं, जिसको मोर लोग मेखाच्छिन्न विजिली समझ कर देखने को उत्कंठित होते हैं. जिसे गोपिकाए श्याम तमाल पल्लत्र करके तोड़ती है, ऐसी श्रीकृष्णजी के शरीर की कान्तिमय पावनी जो जमुना है वह हमरी रक्षा करे ।

समस्त सत्पुरुष हिंदूधर्मानुयायियों को यह संदेह होता है कि मुसलमान और ईसाई धर्म में जो ब्राह्मणादिवर्ण हिन्दू भाई मिलगये है ये फिर अपने हिन्दू धर्म में आसकते हैं या नहीं । पुनः अपनी जातिमें आसके इसीमत को सिद्ध करने के लिये मैं यहाँ मान्य ग्रन्थो के प्रणाम देता हूं ।

॥ श्रीमद्भागवते ॥ श्लो० ॥ स्तेन सुरापो मित्रद्रुक् ब्रह्महा गुरु तल्पगः । स्त्रीराज पितृ गोहंता ये चपातकिनो परेः ॥

अर्थः-चोरी करने वाला मदिरा पीने वाला मित्र द्रोही ब्रह्म हत्यारा, गुरु पत्नी गामी, स्त्री हत्या करने वाला, राजा और पिता तथा गाय को मारने वाला और जो इनसे परे हैं ।

तेषा मेवप्य धवतां इदमेव सुनिष्कृतम् । नामव्या हरणं विष्णोः य तस्तद्विषयामती ॥

अर्थः-इन सब के लिए यही निश्चय किया गया है कि विष्णु भगवान के नाम से और तद्विषयामती होने से शुद्ध हो जाता है ।

किरातहूणांध्रपुलिंद पुल्कषा आभीरकंका यवना खुसादयः ॥ येन्ये च पाता यदुपाश्रया श्रया शुद्धंति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥

अर्थः-किरात, हूण, आंध्र, पुलिंद, पुल्कष, आभीर, कंक, यवनादि म्लेच्छ जाति ये भगवद् भक्तों की सेवा करने से शुद्ध होते हैं । इस प्रकार भागवत के प्रमाण से विदित होगया कि जिनको लोग चांडाल मानते हैं, उन लोगो की शुद्धि इस तरह हो जाती है तो जो हमारे हिंदू भाई जबर्दस्ती यवन बना लिये गये हैं उनको तो शुद्धी होने में सन्देह ही क्या है । अब हमको इस बात का पता लगाना है कि कौन से नाम और कौन सी बिधी के करने से दूसरे धर्म में गये हुए भाइ फिर शुध्द होकर अपनी अपनी जाति में मिल सकते हैं । इसके लिए कलिसंतरणौपनिषद का तारक मंत्र प्रमाण है लिखा है:—

तराति ब्रह्म हत्यांस वीर हत्यां तथेवचः मुच्यतेहेम चौर्यान्स वृषली गमना तथा पितृदेव मनुष्याण

मृणायनथनातथा॥स्वस्वधर्म परित्यागी पापात्सद्यः प्रमुच्यते ॥ इत्युक्त वांत्रिवारं त्वजयोनिर्नारदायवै । इति कलिसंतरणोपनिषद् ॥

अर्थः—ब्रह्म हत्या, वीर हत्या, चोरी, और वेश्या गमन आदि पापों से तारक मंत्रको जपनेवाला पापोंसे छूट जाता हैं इस मंत्र से मनुष्य पितृ देव और मनुष्यों के ऋण से छूट जाता है और अधर्म से रहित जो पापी है वह भी अपने पाप से मुक्त हो जाता है । ब्रह्मा जी ने नारद जी से कहा कि वह तारक मंत्र यह है:—हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥ इस मंत्र की विधी विशेषतया कलिसंतरणौपनिषद् और आनंद रामायण में लिखी है । इसके अतिरिक्त और भी अनेक पुराणों में इस मंत्र की महिमा वर्णित की गयी है । पूर्व समय में पंडित नीलकंठ नामक एक विद्वान् ने नीलकंठ नाम का तंत्र बनाया है उसमें इस प्रकार प्रमाण है ।

एकदापार्वती देवी नत्वा देवं महेश्वरं ॥ प्रपच्छदेव देवेशं निजानंद स्वरूपिणम् ॥

अर्थः—एक समय पार्वती जी सब देवों के देव और जिसका स्वरूप आनंदमय है ऐसे महादेव जी का प्रणाम करके इस प्रकार पूछा ।

स्वर्ण स्तेई सुरापानी ब्राह्मणः वृषलीपतिः ॥ भ्रुणहा विषदाई च ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगः ॥

अर्थः—स्वर्ण चोरी करने वाला, मदिरा पीने वाला, गर्भ हत्या करने वाला, वेश्यागामी, विष देने वाला, ब्रह्म हत्या करने वाला, गुरु पत्नी से भोग करने वाला और

चांडालगृहभोजी च म्लेच्छ पकवान्न भोजिनः अन्येपापसमायुक्ता क्लिश्यमाना नराभुवि ॥

अर्थ—चांडाल के घर में खाने वाला, म्लेच्छ के हाथ का खानेवाला और दूसरे पापों से समायुक्त इस लोक में जो दुःख पा रहे हैं उनके लिये.

कथंनुभगवन्नोते महापातकदंतिनः नविभ्यंति जनास्सर्वे तच्चमे ब्रूहिशंकरः ॥ केनोपायेन शुध्यते जनाह्येते कुपात्कात् ॥ त्वदन्य संशयस्यास्यच्छेत्ता कोपि न विद्यने ॥

अर्थः—हे शङ्करजी कृपाकर बताइये कि इस कुपातक से मानव लोग किस प्रकार शुध्द होते हैं। बिना आपके दूसरा कोई इस संशय को दूर करनेवाला नहीं है।

पातकेन च युक्तानाँ जनानाँ भयशालिनां ॥
निष्कृतिं ब्रूहि देवेश सर्वकाम वरप्रद ॥

अर्थः—भय से तथा और पाप करके युक्त जो मनुष्य हैं, उनको इस पातक से छूटने का उपाय है सब कामनाओं के पूर्ण करनेवाले स्वामिन्! निष्कृति कहिये ॥ ईश्वरोवाच ईश्वर। ने कहा।

श्रृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि पापिनां शुद्धि हेतवे।
ये न तुष्यति श्रीरामो रमानायक राघवः ॥

अर्थः—हे प्रिये जिससे पापियों की शुध्दि हो जाय उसे सुनो मैं कहता हूं जिससे श्रीरामचंद्र श्री संतोष करते हैं और

इदानीं तु त्वया पृष्टं वच्मिशंकानिवारणे।
एतद्गुह्यं महद्देवी गोपनीयं प्रयत्नतः ॥

अर्थः—हे देवि इस समय तुमने जो पूछा है उसे अब मैं शंका निवारण के लिये कहता हूँ यह बड़े प्रयत्न से गोपनीय है। श्री पाराशर भट्ट कृत सर्वज्ञ संहितायां प्रायश्चित्त प्रकरणेत्तम्

शृणुष्वाद्य प्रवक्ष्यामि विष्णोर्मंत्रं नराधिप ।
यं कृत्वासर्व पापेभ्यो मुच्यतेनात्रसंशयः ॥

अर्थः—सुनो मैं विष्णु मंत्र को कहता हूँ जिसके जपने से मनुष्य सब पापों से छूट जाते हैं इसमें संदेह नहीं ॥

वर्णाश्रम विहीनोपि तारकेन गतिर्भवेत् ।
ओं राँ राम रामायेति मंत्रस्सर्वार्थ साधकः ॥

अर्थः—अपने वर्ण से विहीन मनुष्यकी तारक मंत्र से गति होती है ॥ ओं राँ राम रामायेति यह मंत्र सर्व साधक है ॥

शंकरेणोदितं पूर्वं तारकं नाम नामकं ।
हिताय जाति भ्रष्टानां साधनार्थं परस्य च ॥

अर्थः—पूर्वकाल से ये राम नाम करके जो तारक मंत्र है उसको भगवान शंकर ने जाति भ्रष्टों को परसाधन के लिये कहा है ॥

अष्टोत्तर शतं जपत्वागव्यमालेढयेत्पुनः ।
तद्गव्यं प्रासये द्धीमान् भक्षयेत्रिदिनं फलम् ॥

अर्थः—इस मंत्र को १०८ वार जप के फिर गव्य को आलोढन करना ॥ बुध्दिमान् उस पंचगव्य का पान करे और तीन दिन तक फल खाय ॥

वर्णाश्रम विहीनोपिम्लेच्छ हस्ते न भोजिनः ।
मुत्र मुत्यादितोम्लेच्छां सोपि शुध्यति वै द्विजः ॥

अर्थः—वर्णाश्रम विहीन और म्लेच्छ के हाथ का खाया हुआ तथा म्लेच्छ स्त्री में पुत्रोत्पत्ति किया हुआ ब्राह्मण भी शुध्द होता है ॥

अनेनैव विधानेन संततिस्तस्य शुध्यति ।
त्रिसप्तक कुलोद्धारं तारकेन प्रजायते ॥

अर्थः--इस विधान से उसकी संतति शुध्द होती है ॥ तारक मंत्र से त्रिसप्तक कुलद्धार भी होता है ॥

शाध्येन ये न गृह्नंति न तेषाँ शुद्धिर्हीयते ।
शठाय न प्रदातव्यं विधिरेषा मयेरिता ॥

अर्थः--हठ से जो प्रायश्चित्त करना चाहते हैं उनकी शुध्दि नहीं और हठबादी के लिये शुध्दि की विधि नहीं देना चाहिये ऐसा मुझसे कहा गया है ॥

अगम्या गमनाध्यैश्च विमुक्तः सर्व पातकैः ।
अन्ते विष्णु पदं गत्वा वैष्णवैस्सह मोदते ॥

अर्थः--इस विधि से मनुष्य अगम्यागमन जो पाप हैं उनसे मुक्त होकर अन्त में विष्णु पद को प्राप्त होता है और विष्णु भक्तों के साथ विहार करता है ॥

देवताय तने राजन् गव्यंपीत्वाविधानतः ।
सर्वपाप विनिर्मुक्तो ब्राह्मणैस्सह हमोदते ॥

अर्थः--हे राजन् देव-स्थान (मंदिर) में पंचगव्य को विधान से पान करके सब पापों से छूटकर प्राणी ब्राह्मणों के साथ मोदकर सकता है ॥

विधानवत्सश्रुणितं त्वयाहि पिवस्वगव्यं विधना नरेन्द्र ॥ भजस्वधर्मं हरितोषणेन कुरुष्वराज्यं प्रजनेरती च ॥

अर्थः--हे वत्स तुमने यह विधान सुना है ! हे नरेन्द्र पंचगव्य को पान करो विधि से हरि तोषण से धर्म का भजन करो प्रजाओं पर प्रेम करके राज्य का पालन करो ॥

अन्य च नारदपंचरात्रे ॥

म्लेच्छैः संस्कृतैवर्णा कथं धर्मं चरंतिते ।
स्वधर्मकेन विधिना प्राप्यते वद मे प्रभो ॥

अर्थः—म्लेच्छों करके असंस्कार को प्राप्त हुये जो ब्राह्मणादि वर्ण हैं वे कौन सी विधि से स्वधर्म अर्थात् अपनें धर्म को आचरण कर सकता है हे प्रभो यह मुझसे कहो ॥ इस प्रकार गरुड़ जी के पूछने से श्रीविष्णु भगवान् ने उत्तर दिया ॥

ओंकारं पूर्वकं मंत्रं तारकं शं करोदितम् ।
(मनुनोदितं इत्यपि पाट) अष्टोत्तर शतं जपत्वा
पिवेतगव्यं दिन त्रयम् ॥

अर्थः—ओंकार है पूर्व जिसके ऐसा जो तारक मंत्र शंकर का और मनु जी का कहा हुआ है उस मंत्र को एक सौ आठ बार जप के तीन दिन पंचगव्य पीवे ॥

त्रिदिनं एक वारं तु फल फूलानि भक्षयेत् ।
वर्जये दातुरान् वृद्धान् स्त्री बालाँश्च गदान्वितान् ॥

अर्थः—तीन दिन एक बार नित्य फल मूल खाय और प्रायश्चित्त के ये अधिकारी नहीं हैं, स्त्री, बालक, रोगी, वृध्द और आतुर ॥

एवं कृतेन विधिना हवनं कारयेत्पुनः ।
तारकेणैव मंत्रेण जुहात् क्षीरं तिलान्वितम् ॥

अर्थः—इस प्रकार विधि करके हवन करे और दूध और तिल से आहुति देवे ॥

विधिनानेनगरूड़े पीत्वा गव्यं शुचिर्भवेत् ।
अगम्या गम्य भोजीच म्लेच्छस्यान्नभोजिनः ॥

अर्थः—हे गरुड़ इस विधि से गव्य पान के करके अगम्यागम्य भोजी और म्लेच्छ का अन्न खाने वाले भी शुध्द होते हैं ॥

पतितान्नं जलंवा पि येनभुक्तं तु प्रत्यहं ॥

अर्थः—पतितों का अन्न जल जिसने नित्य खाया हो सो ॥

अष्टोत्तर शतैनैव भक्तया चैव पुनः पुनः।
तारकेणैव मंत्रेण गव्य मालोढयत्पुनः ॥

अर्थः--एक सौ आठ बार भक्ति से बार बार जप के पंचगव्य को कुशा से आलोढन करे ॥ अर्थात् अभिमंत्रित करे ॥

ते सर्वेपि पवित्रास्युः दैवेपित्रे च कर्माणि मत्।
पूजा भागिनो ह्येते सत्यं सत्यं न संशयः ॥

अर्थः--इस प्रकार प्रायश्चित्त करने से जाति भ्रष्ट मनुष्य ये सब देवकर्म और पितृकर्म करने योग्य होते हैं और मेरी पूजा के अधिकारी होते है ॥ यह संदेह छोड़ के सत्य सत्य जानो ॥ भगवान ने इस श्लोक में दो वार सत्य सत्य कहा है इसका मतलब यह है कि एक वचन देवरूपी जो मैं हूँ और दूसरे वचन से पितृरूप जो मैं हूं दोनों रूपों में मेरी पूजा के अधिकारी होता है ॥ इस श्लोक का असली तात्पर्य यह है कि सव्यापसव्य वेद कर्म करने का अधिकारी होता है ॥

तस्मात् पापप्रशांत्यर्थं होम कुर्यात् विचक्षणः।
तत्रायुतं तदर्थवा सहस्रं वा शतं तथा ॥
होमं दानं तथा कृत्वा मुक्तो भवति नन्यथा ॥

अर्थः--इस वास्ते पाप के शांति के अर्थ विचक्षण याने पवित्रता से हवन करे ॥ वहाँ पर दश हजार पांच हजार एक सहस्र अथवा सौ बार होमदान करके मुक्त हो जाता है अन्यथा नहीं ॥

छद्मना कारितोये न प्रायश्चित्तं मयोदितं।
कर्ताकारयिता सर्वे वजंति नरकान् सदा ॥

अर्थः--मुझसे कहे हुए प्रायश्चित्त को जो कोई खोटे मन से करेगा तो करने वाला और कराने वाला ये दोनों सदा नरक को भोगेंगे ॥

यरांनं तारकंश्राद्धे जपन्त्युच्छिष्ठ सन्निधौ ॥
तुष्यंति पितरः सर्वे पितृ मातामहादय ॥

अर्थः--जो कोई इस तारक मंत्र को श्राध्द में उचिष्टों के पास बैठकर जप करते हैं उनके पितृ माता मह आदि संतुष्ट होते है ॥

ओं रां रामायेति तारकं वै जपेत्सदा ॥
सदा चाररतोनित्यं अन्ते ब्रह्म पदंव्रजेत् ॥

अर्थः--'ओं रां रामाय' इस प्रकार तारक मंत्र सदा जप करे ॥ सदाचाररत होकर नित्य प्रति जो ऐसा करता है वह अन्त में ब्रह्मपद को पहुंचता है ॥ धर्मशास्त्रादिकों में पतितों की शुध्दि के इस प्रकार जो प्रमाण लिखे हैं वे यहां पर इकठ्ठा कर दिये हैं ॥

इति श्री शुद्धि प्रभाकरे निगमागम संहिते हरि विलासंगृहीते प्रमाण प्रकरणं समाप्तः ।

अथ वर्ण भ्रष्टानां पंचगव्य पान विधिः ॥

अर्थः--प्रायश्चित्त दो प्रकार के हैं, एक वेद विहित, दूसरा पुराण विहित यहाँ पर दोनों विधियों को लिखता हूँ ॥

अथ प्रयोगः ॥

भूमौस्वेत वस्त्रो परितंडुलान् संस्थाप्य ॥

भूमिपर सफेद कपडा बिछाकर चांवल धरे ॥

तस्योपरि उत्तराभिमुखं भूत्वा पंचगव्य पात्रान् स्थापयेत् ॥

अर्थ--उसके ऊपर उत्तराभिमुख होकर पंचगव्य पात्रोको रखे ।

प्रथम पात्रे दुग्धं ॥ द्वितीय पात्रे दधिम् ॥ तृतियपात्रे घृतं चतुर्थ पात्रेगोमयम् ॥ मध्यपात्रे गोमूत्रम् ॥ एतेक्रमशः उत्तरतः आरभ्य पाश्चिम वधि पर्यंत तंडुलो परिस्थापितं पांत्रचतृष्कं संस्थाप्य मध्ये गोमूत्र पात्रं स्थापयेत् ॥

अर्थ--ये सब क्रम से उत्तर से लेकर पश्चिम तक चांवलों के ऊपर उत्तराभिमुख होकर चारपात्र स्थापित करें ।

उत्तरे-दुग्धं । पूर्वे-दधिम् ॥ दक्षिणे-घृतं । पश्चिमें--गोमयं ॥ मध्येः गोमूत्रं ॥ पुनः अग्रे भूमौ सपाद हस्त परिमित चतुष्कोणं स्वेत वस्त्रं प्रसार्य ॥

फिर उत्तर के तरफ मुख करके अपने सामने पृथ्वी में सवा हाथ चौ कोने वस्त्र को बिछा के-

तस्योपरि तंडुलान् धृत्वा ॥

उसपर चावलों को धर के

पूर्वोक्त क्रमेणैव अन्य पंचपात्रान् स्थापयेत् ॥ एषु पंचगव्यवत् स्थापित पंचपात्रेषु तत्तद्रव्य देवतान् प्रत्यधि देवतात् पूजीनीयम् ॥

पहिले कहे हुए क्रम से अन्य पंचपात्रो कों स्थपित करे। इन पंचगव्य पात्रोंके समान स्थापित करे। पात्रों में उसउस द्रव्य देवताओं को और उस उस प्रत्यधि देवताओं को अभिमंत्रित करना चाहिये ।

पुनः एकास्मिन् शुद्धपात्रे गंगा जलं वा शालिग्राम धौतजलं निक्षिपेत् ॥

फिर एक शुद्ध पात्र में गंगा जल अथवा शालिग्राम जीको स्नान कराये हुए जल को डालना चाहिये ।

पूर्वं जले गायत्र्या अभिमंत्रित गोमूत्रं मेलनीयं ॥

पहिले जल में अभिमंत्रित किया हुआ गोमूत्र को गायत्री मंत्रसे मिलाना चाहिये ॥

पुनः गोमयम् ॥ पुनश्चघृतम् ॥ पुनः दधिम् ॥ पुनः । दुग्धम् ॥

क्रमसे-गोमय घृत, दही, और दूध मिलाना ॥

इदं सर्वं पंचगव्यं तारक मंत्रेण अष्टोत्तर शतवारं कुशैरा लोढयेत् ॥

इस पंचगव्य को तारक मंत्र से १०८ वार कुशाओंसे आलोढन करना चाहिये ॥

पुनः एतद्गव्यं संकल्पं कृत्वा गुरु हस्तेन वारत्रयं पेयम् ॥

फिर इस गव्य को संकल्प करके गुरूके हाथसे लेकर तीन वार पीवे ॥

तत्समये एतन्मत्रं उच्चरेत् ।

उस समय इस मंत्रको पढ़ना चाहिये—

यस्त्वगाति गतं पानं देहे तिष्ठति मामके ॥
प्रासनात्पंचगव्यस्य दहत्यग्नेव इंधनम् ॥

मेरे शरीर में अस्थिगत् जो कुछ पाप है सो पंचगव्य पान से जैसे लकडियों को अग्नि जला देता है उसी प्रकार मेरे पापों के वह नष्ट कर दे ॥

तदनन्तर मंगन्यासंकरणीयम् ॥

उसके बाद इन मंत्रो से अंगन्यास को करे ॥

ओं हृदयायनमः । ओं भू शिरसे स्वाहा । ओं भुवः शिवायै वौषट् ॥ ओं भूर्भुवः नेत्राभ्याँ वौषट् ओं ॥ भूर्भुवः स्वः अस्त्रायफट् । पाराशरः उपवास महोरात्रं ब्रह्मकूर्चं विनिर्दिशेत् पंचगव्ये चवर्णेभ्यो विहितंदिव्य चक्षुषा ॥ पवित्रं त्रिषु लोकेषु देवता भिरनुष्ठितम् । मध्यमे न पलाशस्य पद्म पत्रेणवापिवेत् ।

पराशर जी कहते हैं कि अहोरात्र उपवास और ब्रह्मकूर्च नाम जो प्रायश्चित्त है उसको करे । यह पंचगव्य चातुरवर्ण याने ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र इनको दिव्य नेत्रों के समान विहित है और तीनों लोकों में पवित्र है ॥ यह देवता लोगोसेभी अनुष्टित किया गया है ॥ पंचगव्य को पलाश या कमल पत्र से पीना चाहिये ॥

इति शुद्धि प्रभाकरे नेगमागम संहिते पंचगव्य पान विधि समाप्तः ॥

अत्र पंचगव्य पानादनंतरं श्रीरामप्रियकरं राम सहस्र नाम अथ वारामष्टकंजनैः श्रद्धया पठनीयम् ।

यहां पंचगव्य पान के अनन्तर श्रीरामचंद्र प्रियकर राम सहस्रनाम अथवा रामाष्टक श्रद्धासे मनुष्यों को पढ़ना चाहिये यह निलकंठका वाक्य है ॥

॥ महादेवोवाच ॥

श्रीरामाष्टकं प्रारंभः ओं अस्य श्री तारक महामंत्रस्य ब्रह्मऋषिः । श्रीरामोदेवता गायत्री छंदः ओं बीजं सीता शक्तिः हनुमान् हृदयम् आदित्योति कीलकम् ।

शार्ङ्गधन्वा गदाधरेत्यस्त्रम् । रामेति कवचम् ।
ओं राँ रामायनमः इति परमोमंत्रः श्रीराम
प्रीत्यर्थेस्तोत्र मंत्र जपे विनियोगः। अथ करन्यासः
ओरां अंगुष्ठाभ्यांनमः। ओं रामेति तर्जनीभ्यांनमः
ओं नमइति मध्यमाभ्यांनमः। ओं हनुमानालिंग-
नायेति अनामिकाभ्यांनमः ओं आदित्येति कनि-
ष्ठिकाभ्यां नमः ओं देवाय करतल करपृष्ठाभ्यांनमः।
इति करन्यासः। अथ हृदयादि षडंगन्यासः।
ओं सुव्रतेति हृदयायनमः। ओं विश्वात्मा आदि-
त्येति शिरसे स्वाहा सहस्राचि शिखायै वौषट्।
लक्ष्मणायेति बलायक वचायहुँ। भरतायेति नेत्रा-
भ्यां वोषट् शार्ङ्गधत्वा वीर्याय अस्त्रायफट्। शत्रुघ्न
भूर्भुवः स्वर्गामिनिदिग्बधः इति। अथध्यानम्।
श्रीरामरघुबंश मंडनमणि सीता मनोनायके
ब्रह्मेशानमरुद्गणैस्स ऋषिभिः संसेव्यामान सदा ॥
ध्येय भक्त जनै सुसेवितमहा सिंहासनस्थंविभु
वेद्यतस्वविदैस्स कोमल तनुं वंदेचूरणां पतिम् ॥
इति ध्यानम् ॥ श्रीराम राम भव भंजिन राम
राम श्री वायु पुत्रपदसावित राम राम श्रीजानकी
हृदयरंजन राम राम श्री सूर्यवंश परिशोभित राम
राम ॥ १ ॥ श्रीरामदेवेश जगन्निवास श्रीराम भक्त

प्रियराघवेश श्रीगोपि पुत्रस्यमखसुरक्षापिताज्ञहेतो जटवल्कधारी ॥ २ ॥ नियतात्मा सदा चारः कौशल्यानंद वर्धनः खरदूषणहतां च जगत् पालन तत्परः ॥ ३ ॥ कृपीणां कष्ट छेत्तारो अहल्याशाप मोंचनः ॥ जटायु स्वर्ग दातारो कबंध मोक्षदायकः ॥ ४ ॥ सुग्रीव प्रिकर्तारा इंद्र सूनं श्वहंतकः ॥ को दंडी सुव्रतः पुरुषः विश्वात्मा रविपूर्जकः ॥५॥ सा स्त्रार्चिर्महाबाहुः लक्ष्मणं सुखदायकः भरतशतृघ्न प्रेमिश्च शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ॥ ६ ॥ बिभीषण परित्राणो कुंभकर्ण विनाशनः ॥ रावणां तक दुर्धर्षः दैत्यवंशाविनाशकः ॥ ७ ॥ देवर्षिर्नारदाद्येश्च ब्राह्मणै स्सुर पूजित ॥ महापातकहर्ता च भक्तमंदा रविग्रहः ॥ ८ ॥ यपतत्तारकमंत्र पठे द्वैमंत्र पूर्वकम् ॥ तस्य नश्यति पापानि महाकोटियुतानि च मंत्रात्मकमिदं सर्व आख्यातं सर्व मंगलम् ॥ यः पठेच्छृणु याद्वापि तस्य ब्रह्म पदंलभेत् ॥ तावदेव म द्स्तेषां महा पातकदतिनाम् ॥ या यत्रश्रुयते राम नाम पंचानन ध्वनिः ॥ ब्रह्मघ्नश्चसुरायश्चस्ते ई च गुरुतल्पगः ॥ शरणागतघाती च मित्र विश्वास घातकः ॥ मातृहा पितृहा चैव भ्रुणहा बीरहा तथा ॥ कोटि कोटि सहस्राणि अति पापानि या न्यपि ॥ संवत्सर

कृते जाप्ये प्रात्यहं रामसन्निधौ निष्कलंक सुखं भुङ्क्त्वा ततोमोक्षमवाप्नुयात् ॥ य एतेन विधिन पिवेत् गव्यं वरानने ॥ अभक्षा भक्षभोजी च म्लेच्छ वृत्तौरतेजनः ॥ तेसर्वे शुद्धि मायांनि सत्यं सत्यं न संशयः । येनराः प्राप्त संदेहा प्रायश्चित्त-मयोदिते ॥ ते प्राप्नुवंतिनरकं क्रिमिभूतानसंशयः ॥

इति श्री शुद्धि प्रभाकरे निगमागमसंहिते पंचगव्यपानोत्तर स्तोत्र पाठं समाप्तः ॥

अथ पंचगव्य मंत्राः ॥

ओं तत्सवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य धीमही ॥ धियो-योना प्रचोदयात् ॥ इत्यनेन गोमूत्रन् ॥ गंधद्वारां दुराधर्षा नित्यपुष्टांकरीषिणीं ॥ इश्वरीं सर्व भूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ इत्यनेनगोमयं ॥ आप्या यस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्णयम् ॥ भवा-वाजस्स संगधे ॥ इत्यनेन क्षीरं ॥ ओंदधिक्रावणों अकारिषं जिष्णो रश्वस्य वाजिनः सुरभिनोमुखा-करत्प्राणा आयूंषि तारिषत् ॥ इत्यनेन दधिम् ॥ घृतम्मिमिक्षे घृतमस्य यो निर्घृतेशिश्रतो घृतमस्य-धाम ॥ अनुष्वधमावहमादयस्वस्वा हाकृतं वृषभ वक्षिहव्यं ॥ इत्यनेन घृतं ॥ शन्नोदेवीरमिष्ट

य आपो भवंतु पीतये शंयोरभिस्रवंतुनः ॥
इत्यनेन जलं ॥ अथ पंचगव्य मेलन मंत्रः ॥
पूर्व पठित शन्नोदेवी इति मंत्रेण यज्जल पात्रं
तस्मिन् पात्रे अनेन मंत्रेण एकैकं मेलनीयं ॥
तदित्थं ॥ देवस्य त्वास वितु प्रसवे अश्विनोबाहु-
भ्यांपूष्णो हस्ताभ्याम् ॥

इस मंत्र से पहिले पठित जल पात्र में गो मूत्र मिलावे फिर गोमय मिलावे अनन्तर दूध उस के बाद दही और घृत ये सब एक एक क्रम से मिलावे ॥ पहिले जो विधि लिखी गई है पंचगव्य स्थापन की उसके लिए ये मंत्र लिखे गये हैं ॥ इन वेद मंत्रो से अभिमंत्रित करके पञ्चगव्य पान कराना समस्त मुनियों के मतानुसार है ॥ जब पंचगव्य पान कराते हैं तब संकल्प करके करात है ॥ क्योंकि हर एक कर्म विना संकल्प के सिद्ध नहीं होता ॥ लिखा भी है ॥

यागः संकल्पे न सिद्धिः ॥ संकल्पः चित्त
वृत्तीनिरोधः ॥

संकल्पसे सिद्धिके प्रमाण येहि है । संकल्प इस प्रकार है ॥

अद्ये त्यादि पठित्वा अमुक गोत्रोहं अमुक नामाहं
आत्मनः अभक्षाभक्ष अपेयापेय अगम्यागम्य
स्पृश्यास्पृश्यादि सकल दुरित दोष परिहारार्थं
आत्मनः श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं
पंचगव्यपानमहंकरिष्ये ॥

इस प्रकार संकल्प करके पीवे ॥ इस संकल्प का आशय यह है— मैंने जो अभक्षाभक्ष किया है, अगम्यागम्य किया है, और अपेयापेय किया है, नहीं छूनेयोग्य को छूआ है ऐसे जो दोष हैं उनके दूर करने के लिए यह पंचगव्य पान करता हूं ॥

इससे अच्छी तरह मालूम होता है कि शुद्धि में पंचगव्य पान करना ही मुख्य है ॥

इति श्री शुद्धि प्रभाकरे निगमागम संहिते मंत्र प्रकरणं समाप्त ॥

जब चाँडाल जाति मंदिर में जाने से और दर्शन करने से पवित्र हो जाती है तत्रावेद मंत्रानुसार बिधि को स्वीकार करने से वर्ण श्रेष्ठ क्यों न हो "इस कलियुगमें सिर्फ शुद्धि आदि कर्मों में भगवन्नाम जो पुराणादिकों से लिया गया है वह मंत्रात्मक माना गया है ॥ इसमें श्रीमद्भागवत् जो पुराणों में उत्तम पुराण मानागया है उसमें से प्रमाण लिखे गये हैं" और ग्रंथों के भी प्रमाण लिखे गये हैं यह प्राचीन पद्धति के अनुसार जाति पक्ष छोड़ के माननीय हैं भगवान् के जितने नाम हैं वे सब अच्छे और मंत्र रूप हैं। भगवान् ने भी किये हैं वैसे ही उनके नाम हैं पतित पावन-इस नाम से मालुम होता है कि पतितों का उद्धार किया होगा तभी पतित पावन नाम हुआ। इसी प्रकार तारक मंत्र से स्पष्ट अर्थ निकलता है कि यह मंत्र सब पापों से छुड़ाकर पवित्र करके श्रेष्ठ गति को देने वाला है ॥

॥ प्रमाण ईश्वरोवाच ॥

अहं भवंनाम जपन् कृतार्थो वसामिकाश्या-
मनिशं भवान्या ॥ मुमुर्षु मानस्य विमुक्त येहं-
दिशामिमंत्रं तवरामनाम ॥

तारक मंत्र की महत्ता का वर्णन करते हुए महादेव जी ने स्वयं भगवान रामचन्द्र से यह कहा है कि मै पार्वती के सहित काशी में आपके नाम को जपता हुवा कृतार्थ होता हूँ और मरते हुए पुरुषो को देख के मुक्ति के अर्थ आपके मंत्ररूप नाम को सुना देता हूँ। इस श्लोक में 'दिशामि' इस पद का मतलब यह है कि महादेव जी कहते हैं कि हे रामचंद मैं मरते हुए मनुष्य को देखकर आपका तारकमंत्र उसके कान में छोड़कर उसकी मुक्ति करा देता हूँ। जब जातिहीन होकर कोइ प्रायश्चित्त नहीं करता है और भाग्यवश यदि काशी में चला जाता है तब मरते वक्त महादेव जी तारक मंत्र ऊसे सुना देते हैं और ऊसका प्रयश्चित्त हो जाता है ॥

अगम्यभक्षयोजात विहायत्वघसंचयम् प्रयाति हरिसायुज्यं विमुक्तं भवबंधनात् ॥

अर्थः—गमन न करने योग्य ऐसी स्त्री के हाथ का बनावा हुआ खाने वाला पापों के संचय को नष्टकर और संसार के जन्म मरण रूपी बंधनों को छोड़ कर हरि सायुज्य अर्थात् मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥

सर्व धर्म बहिर्भुतो भुंजानो वाइतस्ततः। कदाचिन्नारकं दुःखं नाम वक्ता न पष्यति ॥

अर्थः—समस्त धर्मो को छोडने वाला और इधर उधर कहीं भी खाने वाला हरि के नामोक्त कर्म के करने से नरक से छूट जाता है। इस श्लोक में बहुत जगह 'गव्यपानात् न पश्यति' ऐसा भी पाठ मिलता है। इन दोनों पाठों का मतलब यह है कि जाति भ्रष्टों को केवल कलियुग में तारक मंत्र से पंचगव्य को अभिमंत्रित करके पान करना चाहिये ॥ कलियुग में केवल बिना भगवत नाम के उध्दार और प्रायश्चित्त नहीं होता यद्यपि चारों युगों में अभक्षाभक्ष करने वालों को वेद मंत्रो से अभिमंत्रित करके पंचगव्य पान करना ही लिखा है ॥ और भीः—

कलेर्दोषनिधे राजन् अस्ति एको महान्गुणः ॥
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबंधः परं व्रजेत् ॥

अर्थः--हे राजन् दोषों का समुद्र जो कलियुग है उसमें यह एक बड़ा भारी गुण है कि श्रीकृष्णजी का नाम लेने मात्र से मनुष्य सब बंधन से छूट जाता है ॥

कृतेनुध्यायते विष्णुं त्रेतायां यजतोमखैः ॥
द्वापरे परिचर्यायां कलौतद्धरि कीर्तिनात् ॥

सतयुग में ध्यान करके, त्रेता में यज्ञ करके, द्वापर में परिचर्यासे और कलियुग में केवल हरि के कीर्तन से मुक्त होना लिखा है ॥

यह भागवत का प्रमाण है ।

प्रायश्चित्तानि चीर्णानि नारायण पराङ्मुखं ॥
ननिपुनन्ति राजेंद्र सुराकुंभमिवापगाः ॥

नारायण से विमुख होकर प्रायश्चित्त किया हुआ भी वैसे ही पवित्र नहीं होता जैसे कि मदिरा का घड़ा गंगा जी के बीच में स्नान करा देने पर भी पवित्र नहीं होता ॥

न तथाह्यघवान राजन् पूयेत तप आदिभिः ॥
यथाकृष्णार्पित प्राणस्तत्पूरुष निषेवया ॥

अर्थः--शुकदेवजी कहते हैं कि हे राजन् तप आदि से ले कर जितने कर्म हैं उन कर्मों करके पापी पुरुष पवित्र नहीं होता जैसा भगवान की भक्ति और उनकी सेवा से होता है ॥

सकृन्मनः कृष्णपदारविंदयोर्निवेशितं तद्गुण-रागियैरिह ॥ न ते यमंपाश भृतश्च तद्भटान्-स्वप्नेपिपश्यंतिहि चीर्ण निष्कृताः ॥

अर्थ—एक वक्त भी जिसने श्रीकृष्णजी के चरणों में मन को निवेशित किया है और उनके गुणों को जिन्होनें गाया है वे लोग प्रायश्चित्त कर चुके और वे यम की फाँसी हाथ में लिये हुए यमराज के नौकरों को स्वप्न में भी नहीं देखते हैं ॥

यह कथा भागवत में षष्ट स्कंध में लिखी है ॥ और भी प्रमाण है:—

एषमेसर्व धर्माणां धर्मोधिकतमोमतः यद्भक्त्या पुंडरीकाक्षस्तवैरर्चेन्नरस्सदा ॥

महाभारत मे ये बात लिखी है कि भीष्माचार्य जी युधिष्ठिर से कहते हैं कि सब धर्मों से अधिकतम धर्म यही है कि विष्णु भगवान की स्तुति करे ॥

कुतस्तत् कर्म वैषम्यंयस्य कर्मेश्वरो भवान् ॥ यज्ञेशोयज्ञेपुरुषः सर्व भातेन पूजितः ॥ मंत्रतः स्तंत्रतः छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः ॥ सर्वं करोति निच्छिद्र मनुसंकीर्तनं तव ॥ तथापिवदतो भूमन् करिष्याम्यनुशासनं ॥ एतच्छ्रेय फलंपुंसांयत्तवाज्ञानुपालनं॥

अर्थः—वह कर्म विपरीत कब हो सकता है जिस कर्म के आप मालिक हैं ॥ आप यज्ञेश हो और यज्ञ पुरुष हो सर्व भाव से पूजित हो जो मंत्र तंत्र और देशकाल से कम हो और सामग्री से कम हो वो सब कर्म अनुच्छिद्र हो जाता है जहां आपका नाम लिया जाता है ॥ इसका मतलब वह है कि जिस कर्म के ईश्वर मालिक है उस कर्म की पूर्ति जरूर होती है ॥ 'नामसं कीर्तनं अनु' इस पदसे मालूम होता है कि वेद विहित कर्म करने के बाद ईश्वर का नाम जिस कर्म का अधिकारी कहा हो वही कार्य करना चाहिये जैसे कि सन्ध्या मंत्र में—

अच्युतायनमः अनन्तायनमः । गोविंदायनमः ॥

ये कहकर वेदमंत्र पठित जल को पान करते हैं अर्थात् आचमन करते हैं ॥ उसी प्रकार वेदोक्त विधि से पंचगव्य करके पश्चात् तारक मंत्र से अभिमंत्रित करके पान करने की जो विधी लिखी गई है वह वेदोक्त और भागवत के मतानुसार है ॥

इति शुद्धिप्रभाकरे निगमागम संहिते हरिनाम माहात्यं समाप्त ॥

शंकराचार्य ने तो बौद्ध मत में डूबे हुए पुरुषों को स्नान मात्र से ही शुध्द किया है, जिसे सभी इतिहास जानने वाले जानते है और मानते है ॥ उसके अतिरिक्त विश्वामित्र जी भी जब कुत्ते के मांस से बलिविश्वदेव करने को उद्युत हुए तब देवता लोगो ने हाहाकार किया और विश्वामित्र जी से कहने लगे कि तुम येह वेद विरुध्द कर्म क्यों करते हो ॥ तब विश्वामित्र जी ने यह जवाब दिया कि ये मांस कुत्ते के पृष्ट भाग का है अति ही निषिध्द है चांडाल भी इसको नहीं खाते हैं । मे कालके वश होकर आप देवताओं को वेदमंत्रों से देता हूं । फिर देवता लोगों ने शीघ्र ही विश्वामित्र जी का मनोर्थ सिध्द किया । इसी प्रकार याज्ञवल्क ने भी चांडाल के घर का मांस खाकर सद्यः शुध्दि किया और प्राणायामादि करके पंचगव्य पिया। प्राचीन मनुष्यों की शुध्दि इस प्रकार है और समस्त अभक्षा भक्ष में सिवाय पंचगव्य के दूसरा प्रमाण नहीं है और न मिलता ही है । वृध्द मनुजी भी लिखते हैं कि—

शूद्रोपि ब्राह्मण तामु पैति ॥

ब्राह्मणों से शूद्री में जो संतान होती है वह ब्राह्मण होती है । उन सबों को भी पंचगव्यादि पान करा कर और यज्ञोपवीत पहिना कर शुध्द किया जाता है ॥

अब आगे पंचगव्य संग्रह प्रमाण और उनकी तोल आदि का विधान दिया जाता है ॥

॥ अथ पंचगव्यमान प्रकारः ॥

गोमूत्रं ताम्र वर्णाया स्वेतायाश्चापि गोमयं, पयं कांचन वर्णायानीलायाश्चतथादधिः ॥ घृतं च कृष्ण वर्णाया सर्व कापिल मेवच ॥ अलाभे सर्व वर्णानां पंचगव्ये स्वयंविधिः गोमूत्रं माखकान्यष्टौ गोमयस्यच षोडश ॥ क्षीरस्य द्वादश प्रोक्ता दध्नस्तु दश कीर्तितः गोमूत्रवत् घृतस्योक्ता तदर्धंतु कुशोदकं ॥ एकं एकं त्र्यहाभ्यस्तं गव्यसांतपनंस्मृतं ॥ अति कृच्छ्रं चरेदेतत् सर्वपाप प्रणाशनं ॥ येषांत्रिरात्रमभ्यासात् सर्वपाप प्रमुच्यते ॥

तांबे के समान रंग वाली गाय का मूत्र, सफेद गौ का गोबर, सुवर्ण के समान रंग वाली गाय का दूध; नीली गौ की दही, काली गौ का घी लेना चाहिये और कपिला गाय की पांचों चीजें लेनी चाहिये। अगर ऐसी गायों की ये चीजें न मिलें तो कोई वर्ण वाली गाय का पंचगव्य लेना चाहिये ॥ इस पंचगव्य का प्रमाण यह है। आठ मासे गौ मूत्र, सोला मासे गोबर, बारह मासे दूध, दश मासें दही और आठ मासे घी लेना चाहिये और कुशा से अभिमंत्रित किया हुवा जल चार मासे लेना चाहिये। ये एक एक तीन दिन काम में लाये हुए को गव्यसांतपन कृच्छ्र कहते हैं। ये अति कृच्छ्र का आचरण करने से अर्थात् पीने से सर्व पाप नाश होतें हैं इन्हीं को तीन रात्री पर्यंत पान करनेसे सर्व पापों से मनुष्य छूट जाता है ॥

अन्यच्च: एकैकंक मशोनित्यंपिबेत् गव्यं विधा-
नतः ॥ उपवास व्रतं कृत्वा प्रायश्चित्त मथाचरेत् ॥
उपवासे प्यसक्तश्चेत् मूलंवाथदिवा फलं ॥ भक्षयेत्
प्रातमुत्थाय गव्यंपीत्वाततः परं ॥

ये पंचगव्य क्रम से तीन दिन पीवे और विधान पूर्वक उपवास व्रत करे। यदि उपवास व्रत करने में अशक्त होय तो पंचगव्यपान करने के पश्चात् फल या कोई मूल शकरकंद इत्यादि भक्षण करे ऐसा नारद पंचरात्र में लिखा है ॥

अब वेदों के मंत्रों से जो जो इन्द्रियों के द्वारा रात्रि और दिन में जो पाप किये हैं उनकी निवृत्ति के अर्थ वेद मंत्रों को लिखते हैं ॥

सर्व वेद प्रमाणानि वक्ष्याम्यहमतः परं येषां जपश्च
होमश्च हूयं ते नात्रसंशयः सूर्यश्चमा ॥ मन्युश्च
मन्युपतयश्च मन्यु कृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां यद्रात्र्या
पाप मकार्ष मनसा वाचाहस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण-
शिश्ना रात्रिस्तदवलुंपत यत्किंच दुरितं मयि इद
महंमाम मृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमिस्वाहा ॥
आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातुमां ॥
पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म पूता पुनातुमां यदुच्छिष्ट-
मभोज्यं वद्घादुश्चरितमम सर्व पुनन्तु मामापोसतां
च प्रतिग्रहं ५ स्वाहा ॥ ओं अग्निश्चमामन्यु मान्यु
पतयश्च मान्युकृतेभ्यः ॥ पापेभ्यो रक्षन्तां यदन्हा
पापमकार्ष मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्या मुदरेण

शिश्ना अहस्तदवलुंपतु यत्किंच दुरितं मयि इदमहं माम मृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहो मिस्वाहा ॥ अघ मर्षणं वेदकृतं शुद्ध वन्यस्तरतमा कूष्मांडापाव मान्योपि विराजं मृत्युलांगलं ॥ भद्राव्याहृतयो दुर्गा महादोष विनाशिनी ॥ ऋतं च सत्यचेत्यघ-मर्षणं त्रिरात्रं जले पठेत् सर्वमस्मात्पापात् प्रमु-च्यते ॥ हारीतः ॥ हत्वा लोकानपिसमांत्रिपठे दघमर्षणं ॥ यथाश्वमेधावभृथस्तथायं मंत्रमब्रवीत् ॥ रुद्रैकादशाभिर्जप्त्वा तदन्हैवविशुध्याति ॥ यदन्हा-रात्र्यावापद्भ्यां पाप मकार्ष विष्णुर्मातस्मादेन सो विद्वान् मुंचत्वँ हसः ॥ वदन्हारात्र्य वा उपस्थे पापमाकार्ष प्रजापतिर्मातस्मादेन सो स्मान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावापायुना पापमकार्ष मित्रो मात स्मादेन सो विश्वान्मुंच त्वूँ हसः ॥ यदन्हारा-त्र्यावा पाणिभ्यां पापमकार्ष इंद्रोमातस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावा वाचा पापमकार्ष अग्निर्मातस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावाजिह्वया पापमकार्ष आपो-मातस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारा-त्र्यावाप्राणेनपापमकार्ष पृथिवी मातस्मा देनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावाचक्षुषा

पापमकार्षं सूर्यो मातस्माद्देनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावा श्रोताभ्यां पापमकार्षं अर्जैन्यो वा तस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावा त्वचा पापमकार्षवायुर्मातरस्मादेन सो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावांमनसा पापमकार्षंचंद्रोमातरस्मादेन सो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारात्र्यावा बुध्या पापमकार्षं ब्रह्मा-मातरस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥ यदन्हारा-त्र्यावा अहंकारेण पापकार्षं रुद्रो मातरस्मादेनसो विश्वान्मुं च त्वूँ हसः ॥

अर्थः-जो कोइ कहे कि इन मन्त्रों को वर्ण भ्रष्ठ लोगों को नहीं पढना चाहिये तो यह सब झुट है, क्योंकि रामायण में लिखा है ॥

सुश्राव ब्रह्मघोषांश्च विरात्रे ब्रह्मराक्षसां ॥

ऐसी अवस्था में जब ब्रह्मराक्षसों को पढनें का आधिकार है तब इन लोगोंको पढने में क्या संदेह है ॥ ऋचाओं के अर्थ ॥ इसके सर्व वेद-पवित्र मंत्र कहता हूं ॥ जिनका जप और होम महात्मा करते हैं इसमें-संशय नहीं जानना ॥ यह वशिष्ट वचन है ॥ 'अघमर्षण वेद कृत्' तीन-रात्री जल में बैठ कर पढने से मनुष्य सब पापों से छूट जाता है ॥ और भी भद्राव्याहृतयः दुर्गा ये ऋचा महा दोष को नष्ट करने वाली हैं । हारीत मुनि कहते है कि लोकों की हत्या करनेवाला अघमर्षण पढ़ के पवित्र हो जाता है ॥ जैसे अश्वमेध अवभृत अर्थात् यज्ञांत स्नान करने वाला पापों से छूट जाता है वैसे ही ये मंत्र है ॥ और रुद्रैकादश भी जपने से उसी दिन शुध्द होता है इन्ही मंत्रो से घृत तिल और समिध इनका हवन करने से भी मनुष्य शुध्द होते हैं ॥ जल में खड़े होकर जपने से भी

उसी दिन शुध्दि हो जाती है ॥ और शरीर के पवित्र करने के निमित्त जिस जिस इन्द्रिय से दिनको या रात को जो जो पाप किया गया है वह सब यदन्हारात्र्यावा यहां से लेकर अन्त तक जानना ॥ ये वशिष्ठ और हारीत के वचन लिखे गये हैं ॥ इस शुध्दि प्रभाकर ग्रंथ में इतनें आर्योंके वचन तथा प्रमाण हैं:—वशिष्ठ, पाराशर, हारीत, देवव्यास, नीलकंठ, स्कंदपुराण, भवाब्धिसेतु, कर्मविवेक अर्थात् प्राचीन धर्मशास्त्र तुलसीदास आदि और अन्य महात्माओं ने जो जो ग्रंथो में लिखे हैं उनको संग्रह करके ये शुध्दिके प्रमाण लिखे गये हैं ॥ जो महात्मा पक्षपातशून्य हैं और भगवद्भक्त हैं उनके चरण कमल का मैं दास हूं ॥ भागवत में लिखा भी है ॥

रहूगणैतत्तपसानयाति न चेज्ययानिर्वपुणाद्गृहाद्वा ॥
नच्छंदसा नैव जलाग्नि सूर्यैर्विनामहत्पादरजोभिषेकम् ॥

अर्थः-बिना महात्माओं के तत्व ज्ञान प्राप्त नहीं होता ॥ इस सम्बन्ध में भरत भी यही कहते हैं कि:—

अहंपुरा भरतो नाम राजा विमुक्त दृष्टः श्रुतिसंगबंधनः आराधनं भगवत ईहमानो मृगो भवं-मृगसंगाद्धतार्पः ॥ सामां स्मृतिर्मृग देहेपिवीरकृष्णार्चनप्रभवानो जहाति ॥ अतोहंनरसंगादसुसंग संगोऽविशंक मानोऽविवृतश्चरामि तस्मान्नरो संग जातज्ञानासि नेहैववितृष्ण मोहः ॥ हरितदीहा कथन स्मृतिभ्यां लब्ध स्मृतिर्यात्यातिपारमध्वनः ॥

अर्थः—मैं पहिलें भारतवर्ष का राजा था भगवान की भक्ति से महात्माओं की कृपा से तर गया ॥ और भी भगवन्नाम के महात्म्य में लिखा है कि बिना भक्ति के भी लिया हुआ नाम अच्छे फल को देता है ॥ जैसे स्कंद पुराण में लिखा है ॥

हरिर्हरति पापानि दुष्ट चित्तैः शतैरपि ॥ यदृच्छ-
यापिसंस्पृष्टो दहत्येवहि पावकः ॥ अवशेनापियत्-
कर्मकृतंतत्तुसुमहाफलम् ॥ ददाति नृणां विप्रेंद्र-
रामायण प्रसादतः ॥ नारदोवाच ॥ एतत्सर्वं
निशम्यासौविभांडक मुनीश्वरः अभिवंद्य महीपालं
प्रययौस्वं तपोवनं तस्माकुरुध्वं विप्रेंद्र देव देवस्य
चक्रिणः ॥ तन्नाम्ना पठं तोयं सर्वाघः प्रणाशनं ॥

अर्थः -ये विषेश कथा स्कंद पुराण में लिखी है ॥ और और भी प्रायश्चित्त
के विषय में लिखा है किः—

ज्ञाता ज्ञातेषु पापेषु क्षुद्रेषु च महत्सु च॥षट् सुषट् सु
च मासेषु प्रायश्चित्त मुपश्चरेत् ॥ निष्कल्मषोनरो वैश्य
सकृतां तं न पश्यति ॥ याज्ञवल्क्यः ॥ प्रायाश्चित्त
मकुर्वाणाः पापेषु निरता जनाः ॥ अपश्चात्तापिन
कष्टान्नरकान्यांति दारुणान् ॥ विहित स्यानुष्ठाना-
न्निंदितस्य च सेवनात् ॥ अनिग्रहाच्छेंद्रियाणां नरः
पतन मिच्छाति ॥ तस्मात्तेनेह कर्त्तव्यं प्रायश्चित्तं
विषुद्धये ॥ एवमस्यां तरात्माच लोकश्चैव प्रसीदाति॥

अर्थ—छोटे या बड़े ज्ञाता ज्ञात जो पाप हैं उसके लिए ६,६ मास में
प्रायश्चित्त करे तो इस लोक परलोक में सुख पावे ॥

यः प्रवृत्तां श्रुतिसम्यक्शास्त्रं वामुनिभिः कृतं ॥
दूषयंत्यनभिज्ञाय तं विद्यात् ब्रह्म घातिनं ॥

अर्थ—जो प्रवृत्त श्रुतिको और मुनिजनवाक्योंको न समुझि के दोष
देते हैं वही ब्रह्मघाती व वेद निन्दक दुराचारी है ये जो शास्त्रोंको न समुझ
के मनमानी चाल चलते है वही जन मानव धर्म्मविरोधी हैं पूर्व महर्षियोंने

कठिन समस्याके समय वेदोंकी और नीति धर्म्मशास्त्रादिकोंकी रक्षा करी है आज दिन ए ब्राह्मण जातीय विद्याहीन तथा तपहीन होकर ठोकर खाती है और ए कहवाती है अपने मतलबके वास्तेही ब्राह्मणोने ग्रन्थ बनाये है ये लोग एसी बातोंके सुनने के अधिकारी तो नहीं थे मगर करै क्या विद्याहीन तथा तपहीनताके हेतु से ये कर्णशूलवाणी को श्रवण करते हैं और बहुधा प्रजाने धर्म्मग्रन्थोंकी आज्ञाका छेदन करकै ब्राह्मणजातीयका उपकार भूलकर कृतघ्नताके भागीबनते है ब्राह्मणोंने प्रजाके अर्थ अपनी शरीरोको देदिये और देवतावोंके अर्थ भी देदिये जब वृत्रासुरादि दैत्योनें इन्द्रके उपर धावा किआ तब इन्द्रने आकर सारस्वत कुलभूषण दधीचीके शरीरको माङ्गा तब ब्राह्मणने अनायासही अपने शरीरको देदिआ जब रावणादि राक्षसोकी प्रबलता पूर्वक मनुष्योंको खाने लगे तब ब्राह्मणोनें प्रजाको बचानेके अर्थ चित्रकूटसे लेकर समुद्र तट् पर्यन्त दक्षिणावधि अपनेही निवास किआ यह समझकै कि हमको खाय जायगे प्रजा बचेगी एबाते श्रीरामायणमे लिखी है ॥

वा. रा. कां. ३ ॥ सर्ग ६ ॥ श्लोक १६

एहि पश्यशरीराणि मुनीनां भावितात्मनाम् ॥
हतानां राक्षसैर्घोरैर्बहूनांबहुधावने ॥ १ ॥

अर्थ—मुनीलोग कहते हैं रामचन्द्र देखो ब्राह्मणोके शरीरोको राक्षसोंने कैसे खाया हैं ॥

तातपर्य एह है कि पाठक गण इस वातको विचारैंगे कि इहां और किसी जातीयका नाम मात्र भी नही है पूर्व कारण आगया और भी शास्त्र रक्षामे प्रमाण है ॥

पुराशास्त्रे नष्टे जगति किलदुर्भिक्षबहुले सरस्वत्या तीरे दृढ तरतपो सुरगिरिम् समाराद्ध्योद्धारः पुनरखिलशास्त्रस्य कृतवान् ॥ सपूज्योअस्म-वृद्धोजयति कविसारस्वतमुनीः ॥

अर्थः—अब मै उस्सारस्वत मुनिकी जय पुकारता हूं जो हमारे वृद्ध सकल ब्राह्मणवृन्द पूज्य पाददुर्भिक्ष कालमें सरस्वतीके तटपर निवास करके दृढ तपसे युक्त होकर अखिल शास्त्रका उद्धार किय व बनाये सभोंको समस्त पापोंसे उद्धारका मार्ग बतानेवाले हमारेहीं पूर्वजथे ॥ अब इस बखत ब्राह्मण लोग अपने पूर्वजोके कथन तथा कर्तव्यको भूलकर दुसरोपर दोषाक्षेपण करते हैं कि हमारे शास्त्रोंमें कही भी वर्णभ्रष्ट तथा स्पृश्यास्पृश्य अभक्ष्याभक्ष्य अपयापेय अगम्या गम्यादिका कुच्छ भी प्रायश्चित्त नहीं हैं येह तो केवल दयानन्दनेही शुध्दी देकै जातीय भ्रष्ठ कर देनेका मार्ग चलाया है अब मै इसबातको अच्छीतरहसे जानता हूँ ये कथन उनेहीं लोगोंका है जो ग्रामोमें पुरोहिती तथा उपाध्यायका काम करते है । अब वह लोगभी न कहेंगे क्यों कि शुध्दिप्रभाकरको पढ़िये और इतिहास अजामिलका पढ़िये अजामिल कान्यकुब्ज ब्राह्मने नारायण शब्दोच्चारणके पश्चात् समस्त पतितोंके उध्दारके वास्ते रूद्रको प्रसन्न किआ येही वरदान मांगा है कि हे भागवत्तोत्तम रूद्र मेरेको कोई ऐसी विधी बताइये कि जिस्से पतितोंका उध्दार होय येह वाक्य सुनके रूद्रने कहाः—

एवमेतत्पुरा पृष्टंगिरिजालोकहितैर्षिणी ॥ तदहंते प्रवक्ष्यामियत्पूर्वं कथितं मया ॥

अर्थ—रूद्रने कहाकि जो तुमने पूछा वही बात गिरिजाने मेरेको पतितोद्धार के वास्ते पहिले पूछा वही मै तुम्हारेसे कहता हूं ये कथा विशेष तया विवेक चन्द्रिका मे लिखी है और भी नीलकण्ठ तंत्र में भी है प्रकरण बहुत बड़ा है इस लिये पाठक गण विवेकचन्द्रिकामें देखलेवें और सम्मत् १२२८ में जब राम सहाय दूबेको प्रायश्चित्त दियागया है उस वखत येही वाक्य गोविन्द भट्टने सभा सहित मान्य किये थे और ब्राह्मणकी लड़की उमाबाईका जब प्रायश्चित्त किआ तब भी कपाल तीर्थके मेलेमे इश्वरी प्रसादजी पंडितने सभा करी उस सभा संमितीमे इसी प्रधान पध्दती को पंडित्तोने माना उन्होनें अपनी वहूके वास्ते सभा न करी किन्तु जगतोपकारके लिये करी ये सभा १८२६ मे भइथी ऐसा लेख मिला है

प्राचीन पुस्तक होनेसे मासका नाम नहीं मिला और भी बहुतसे प्रमाण विवेकानन्द संग्रहमें भी है उसमे गंभीर संका निवारण प्रकरणमें लिखा है खानेसे तथा पानी पीनेसे धर्म्म नहीं जाता है धर्म्मपदार्थ ऐसी कच्ची चरिआ नहीं है की जो पानीसे तथा भातके खानेसे गली जायगी और सब विद्या तथा अनन्त पातकोसे छुटाकर पतितोंको मोक्ष देदेना ये धर्म्म ग्रंथ येही भारत वासी ब्राह्मणोने बनाये है और भी मनुने लिखा है:—

एतद्देश प्रसूत्तस्यसकासादग्रजन्मः स्वस्वं चरित्रं शिक्षेरन पृथिव्यां सर्व मानवाः ॥

संपूर्ण टापूवोंके निवासीयोने इसी देशके ब्राह्मणोसे विद्या पढी हैं ॥ अब भी ऐसी हीन अवस्थामें ब्राह्मणही हरएक धर्म्मकी रक्षा करते है तथा मनुष्योंको हरएक बात चेतावनी देते है ॥

औरभि पतित्तोद्धार उदाहरण ॥

अर्थः—धर्म्मशास्त्र रहस्य और तत्त्वज्ञान ये दोनों बिना महत्पद रजोऽभिशेकके प्राप्ति कदापि नहीं हो सक्ते है जब धर्म सभाके बीच आकर आदि जन्मादि चतुर्बर्ण कहते है कि हमने सौ सौ महा पातक किये है अब उन पातकोसे हमकी शुध्दि देवो हमारी राजद्वारमें तथा शास्त्रद्वारमें यमद्वारमें शुध्दि होनेका संशय हैं क्यों कि हमने भ्रुणहत्या ब्रह्महत्यादि स्वर्णस्तेय पर्यन्त हिसाब करनेसे सौ महापातकोसे कम नहीं होते हमारी सबोंकी उमर ७५ बर्ष पर्यन्त हो चुकी है अब हमको इस जन्ममें उध्दार करो हे विप्रो ॥ तबतो सभा बहुत हलचल होकर घबड़ा उठी और कहने लगी कि शास्त्रद्वारा जितने दिनोमें तुम शुध्द होगे उतनी अवशेष उमर तुम्हारी नही है न उतना धन भी तुम्हारे पास हैं अब इनोने कहा कि धर्म्मराजके डरसे तो हम आपलोगोकी शरण आये अब आप लोगभी वज्रोपम उत्तर देरहे है और मैने सुन चुका हुं की अगती अशरणोंकी ब्राह्मणही शरण व रक्षक होते है जब इनको अत्यन्त निरास देखा तब दैब योगसे एक रामानुज संप्रदाय निर्वाहक महात्मा

तब उन महात्माने कहा ये जो सभासदोने आपको आज्ञाकी सो

ठौकही है कहो क्यों चौथी कचहरी की तुम्हारेको खबर नहीं है आवो तुमको चौथी कचहरी के द्वारपर ले चलता हूँ ये वाक्य उन महात्माके सुनके सभासदोने कहाकी राजद्वार, तथा शास्त्रद्वार, धर्म्मद्वार, येह तीन आजतक शास्त्रद्वारा सुना हम लोगोने अब वह चौथी कचहरी कौनसी है तब महात्माने कहा:—

सर्व धर्म्मानपरित्यज्जमामेकं शरणं व्रज ॥
अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्ष यिष्यामि माशुच ॥

अर्थ:—और भी इसी वाक्यको मानते हुये बोले भीष्म पितामहजी कहते है राजा युधिष्ठिरजीसे ॥

एषमेसर्वधर्म्माणां धर्म्मोऽधिकतमोमत्तः ॥ यद्भक्त्या पुंडरीकाक्षं स्तेवैरेर्चेन्नरः सदाः ॥ औरभी लेवो नरोमुक्तिमवाप्नोति चक्रपाणी वचोयथा ॥
ब्रह्महत्यादिकं पापं सर्वसंघोविनष्यति ॥

अर्थ:—ये गीताजीकी वाक्य साक्षात्कृष्णजीकी सुनिकै तथा अनुशासन पर्व दान धर्म्मे भीष्म युधिष्ठिर संवाद महाभारतकी सुनिकै सहस्रनामोके अर्थमें नारायण शब्दार्थ प्राप्तिमें सभा भी उन पूर्व लिखित महात्माको प्रार्थना करने लगी तब उन्होने कहा शब्दतत्त्वार्थकी प्राप्ति हमैं कैसे होगी जब आप महापातकियोंको उध्दार करते है तब हमाराभी उध्दार करो तब महात्माने जवाब दिया कि आपलोगोमें और इनमें बहुत अन्तर है क्योंकि ॥

यश्चमूढतमालोके यश्चबुद्धेपरं गतः ॥
तौवुभौवसुखमेधेत क्लश्यन्त त्यतरेजनाः ॥

अर्थ:—भाईयो बुध्दिमें पाराङ्गत होते है आर जो मूढतर होते है यही सुख पात है आर इतर जन दुःख पाते है ये जो है सो मूढतम है क्योंकि अपने को वृध्दावस्था जानते हुये तुम्हारि शरण आये हैं और आप जो है सो पूर्ण तत्त्व प्राप्तिमें नहीं है इस लिए आप समस्तजन महतोके चरणारविन्दकी रजोऽभिषेक करो तब आपलोगोंको तत्त्वज्ञान प्राप्ति होगी ॥

तथाच ॥ तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेनशेवया ॥
उपदेश्यन्तिते ज्ञानं ज्ञानिनः तत्त्वदर्शिनः ॥

अर्थः—भगवान श्रीकृष्णचन्दजी आज्ञा करते है कि जबतक प्रणिपात नहीं होता है तबतक रहस्य धारण करनेकी अधिकारी नहीं होता है जब रहस्य धारण करनेका अधिकारी होता है तबही परिप्रश्न व सेवासे तत्त्ववेत्तावोंसे तत्त्वाधिकारी हो जाता है ऐसा सारांश अर्थ है और भी कहा है ॥

श्रीमद्भागवते पञ्चमस्कन्धे रहुगण संवादे ॥ रहुगणैतत्तपसानयातिनचेज्ज्यर्यानिर्वपणाद्गृहाद्वा नच्छन्दसानैवजलाग्निसूर्य्यैर्विनामहत्पाद रजोऽभिशेकम् ॥

अर्थ—भरतजी भी येही कहते है हे रहुगण ये भागवध्दर्म्म तपादिसे नही आता है ये तत्त्वज्ञानार्थ भागवध्दर्म्म रहस्य बिना माहात्मावोंके चरणोंकी रजोऽभिशेखके बिना नहीं आता सो तुम पहिले शरणांगति हो फेर महात्मावोंके रजोऽभिशेख सेवासे इस भागवध्दर्म्म तत्त्वको प्राप्ति होगे ॥ इत्यलं ॥

इति श्री कुरुक्षेत्रांतर्गत कमलग्रामस्थ सर्वशास्त्र संपन्न श्रीमान् मिश्र गीतारामाभिधः तत्पुत्र सर्व विद्वज्जनाग्रगण्य रामप्रताप शर्मा तदात्मज हरि विलास निर्मिते निगमागम संहिते शुद्धि प्रभाकर नाम धेय ग्रंथः समाप्तः ।

हरिविलास महन्त स्वामी रामप्रतापशर्मा के पुत्रकी आज्ञानुसार मै लिखा हुं ॥

शृंगारं कृष्णाचार्यः

इति श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥